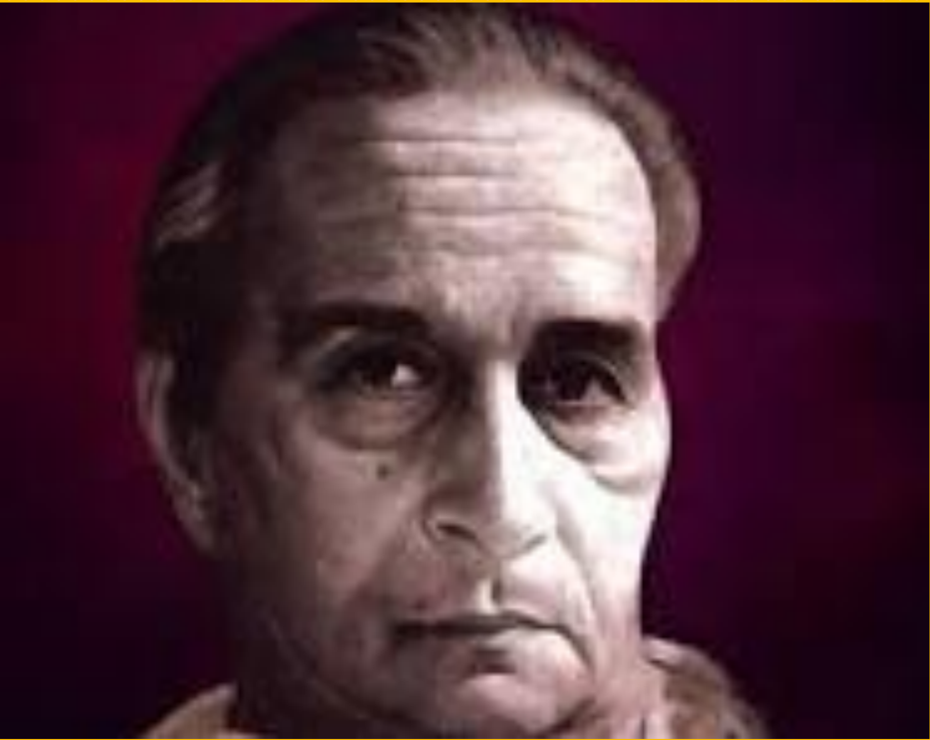
अपनी-अपनी बीमारी



हरिशंकर परसाई

अपनी-अपनी बीमारी

मूल्य पाँच रुपये (5.00)

प्रथम संस्करण 197[illegible] © हरिशंकर परसाई
APNI APNI BIMARI (Satire), by Hari Shankar Parsai

अपनी-अपनी बीमारी

हरिशंकर परसाई

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

क्रम

अपनी-अपनी बीमारी

हम उनके पास चदा मागने गए थे। चदे के पुराने अभ्यासी का चेहरा बोलता है। वे हमे भाप गए। हम भी उन्हें भाप गए। चदा मागनेवाले और देनेवाले एक दूसरे के शरीर की गध बखूबी पहचानते हैं। लेनेवाला गध से जान लेता है कि यह देगा या नही। देनेवाला भी मागनेवाले के शरीर की गध से समझ लेता है कि यह बिना लिए टल जाएगा या नहीं। हमें बैठते ही समझ मे आ गया कि ये नही देंगे । वे भी शायद समझ गए कि ये टल जाएगे। फिर भी हम दोनो पक्षो को अपना कर्त्तव्य तो निभाना ही था। हमने प्राथना की तो वे बोले—आपको चदे की पडी है, हम तो टक्सो के मारे मर रहे हैं।

सोचा, यह टक्स की बीमारी कसी होती है। बीमारिया बहुत देखी हैं—निमोनिया, कालरा, कंसर, जिनसे लोग मरते हैं। मगर यह टैक्स की कसी बीमारी है जिससे वे मर रह थे! वे पूरी तरह से स्वस्थ और प्रसन्न थे। तो क्या इस बीमारी मे मजा आता है? यह अच्छी लगती है जिससे बीमार तगडा हो जाता है। इस बीमारी से मरने मे कैसा लगता होगा? अजीब रोग है यह। चिकित्सा विज्ञान मे इसका कोई इलाज नही है। बडे से बडे डाक्टर को दिखाइए और कहिए—यह आदमी टैक्स से मर रहा है। इसके प्राण बचा लीजिए। वह कहेगा—इसका हमारे पास कोई इलाज नहीं है। लेकिन इसके भी इलाज करनेवाले होते हैं, मगर वे एलोपैथी या होमियोपैथी पढे नही होते। इसकी चिकित्सा पद्धति अलग है। इस देश मे कुछ लोग टैक्स की बीमारी से मरते हैं और काफी लोग भुखमरी से।

टैक्स की बीमारी की विशेषता यह है कि जिसे लग जाए वह कहता है—हाय, हम टैक्स से मर रहे हैं। और जिसे न लगे वह कहता है—हाय, हमे टैक्स की बीमारी ही नही लगती। कितने लोग हैं जिनकी महत्त्वाकाक्षा होती है कि टक्स की बीमारी से मरें, पर मर जाते हैं निमोनिया से। हमें उनपर दया आई। सोचा, कहे कि प्रापर्टी समेत यह बीमारी हमे दे दीजिए। पर वे नहीं

दते। यह कम्बख्त बीमारी ही ऐसी है कि जिसे लग जाए, उसे प्यारी हो जाती है।

मुझे उनसे ईर्षा हुई। मैं उन जैसा ही बीमार होना चाहता हू। उनकी तरह ही मरना चाहता हू। कितना अच्छा होता अगर शोक समाचार यो छपता—बडी प्रसन्नता की बात है कि हिन्दी के व्यग्य लेखक हरिशकर परसाई टक्स की बीमारी से मर गए। वे हिन्दी के प्रथम लेखक हैं जो इस बीमारी से मरे। इस घटना से समस्त हिन्दी ससार गौरवान्वित है। आशा है आगे भी लेखक इसी बीमारी से मरेंगे।

मगर अपने भाग्य मे यह कहा? अपने भाग्य मे तो टुच्ची बीमारिया से मरना लिखा है।

उनका दुख देखकर मैं सोचता हू, दुख भी कैसे कैसे होते हैं। अपना-अपना दुख अलग होता है। उनका दुख था कि टैक्स मारे डाल रहे हैं। अपना दुख है कि प्रापर्टी ही नही है जिससे अपने को भी टैक्स से मरने का सौभाग्य प्राप्त हो। हम कुल ५० रु० चदा न मिलने के दुख मे मरे जा रहे थे।

मेरे पास एक आदमी आता था, जो दूसरो की बेईमानी की बीमारी से मरा जाता था। अपनी बेईमानी प्राणघातक नही होती बल्कि सयम से साधी जाए तो स्वास्थ्यवर्द्धक होती है। कई पतिव्रताए दूसरी औरतो के कुलटापन की बीमारी से परेशान रहती हैं। वह आदर्श प्रेमी आदमी था। गाधीजी के नाम से चलनेवाले किसी प्रतिष्ठान म काम करता था। मेरे पास घटो बठता और बताता कि वहा कसी बेईमानी चल रही है। कहता, युवावस्था मे मैंने अपने को समर्पित कर दिया था। किस आशा से इस सस्था मे गया और क्या देख रहा हू। मैंने कहा—भैया, युवावस्था मे जिनने समर्पित कर दिया वे सब रो रहे हैं। फिर तुम आदर्श लेकर गए ही क्यो? गाधीजी दूकान खोलने का आदेश तो मरते मरते दे नही गए थे। मैं समझ गया, उसके कष्ट को। गाधीजी का नाम प्रतिष्ठान मे जुडा होने के कारण वह बेईमानी कर नही पाता था और दूसरों की बेईमानी से बीमार था। अगर प्रतिष्ठान का नाम कुछ और हो जाता तो वह भी औरो जसा करता और स्वस्थ रहता। मगर गाधीजी ने उसकी जिंदगी बरबाद की थी। गाधीजी विनोबा जसा की जिंदगी बरबाद कर गए।

बडे बड दुख हैं ! मैं बैठा हू। मेरे २ ३ बधु बैठे हैं। मैं दुखी हू। मेरा दुख यह है कि मुझे बिजली का ४० रु० का बिल जमा करना है और मेरे पास इतने रुपये नहीं हैं।

तभी एक बधु अपना दुख बताने लगता है। उसने ८ कमरो का मकान बनाने की योजना बनाई थी। ६ कमरे बन चुके हैं। २ के लिए पैसे की तगी आ गई है। वह बहुत-बहुत दुखी है। वह अपने दुख का वर्णन करता है। मैं प्रभावित नही होता। मगर उसका दुख कितना विकट है कि मकान को ६ कमरो का नही रख सकता ! मुझे उसके दुख से दुखी होना चाहिए, पर नही हो पाता। मेरे मन मे बिजली के बिल के ४० रु० का खटका लगा है।

दूसरे बधु पुस्तक विक्रेता हैं। पिछले साल ५० हज़ार की किताबें पुस्तकालयो को बेची थीं। इस साल ४० हज़ार की बिक्री। कहते हैं—बडी मुश्किल है। सिर्फ ४० हजार की किताबें इस साल बिकी। ऐसे मे कैसे चलेगा ? वे चाहते है, मैं दुखी हो जाऊ, पर मैं नही होता। इनके पास मैंने अपनी १०० किताबें रख दी थीं। वे बिक गईं। मगर जब मैं पसे मागता हू, तो वे ऐसे हसने लगते हैं जैसे मैं हास्यरस पदा कर रहा हू। बडी मुसीबत है व्यग्यकार की। वह अपने पैसे मागे, तो उसे भी व्यग्य विनोद मे शामिल कर लिया जाता है। मैं उनके दुख से दुखी नही होता। मेरे मन मे बिजली कटने का खटका लगा हुआ है।

तीसरे बधु की रोटरी मशीन आ गई। अब मोनो मशीन आने मे कठिनाई आ गई है। वे दुखी हैं। मैं फिर दुखी नही होता।

अन्तत मुझे लगता है कि अपने बिजली के बिल को भूलकर मुझे इन सबके दुख से दुखी हो जाना चाहिए। मैं दुखी हो जाता हू। कहता हू—क्या ट्रेजडी है मनुष्य जीवन की कि मकान कुल ६ कमरो का रह जाता है ! और कसी निदय यह दुनिया है क सिर्फ ४० हज़ार की किताबें खरीदती है ! कसा बुरा वक्त आ गया है कि मोनो मशीन ही नही आ रही है !

वे तीनो प्रसन्न हैं कि मैं उनके दुखो से आखिर दुखी हो ही गया।

तरह तरह के सघष मे तरह-तरह के दुख हैं। एक जीवित रहने का सघर्ष है और एक सम्पन्नता का सघष है। एक न्यूनतम जीवन स्तर न कर पाने का

दुख है, एक पर्याप्त सम्पन्नता न होने का दुख है। ऐसे मे कोई अपने टुच्चे दुखों को लेकर कैसे बैठे ?

मेरे मन मे फिर वही लालसा उठती है कि वे सज्जन प्रापर्टी समेत अपनी टैक्सो की बीमारी मुझे दे दें और मैं उससे मर जाऊं। मगर वे मुझे यह चास नहीं देंगे। न वे प्रापर्टी छोड़ेंगे, न बीमारी, और मुझे अन्तत किसी ओछी बीमारी से ही मरना होगा।

पुराना खिलाडी

सरदारजी ज़बान से तदूर को गम करते हैं। ज़बान से बतन मे गोश्त चलाते हैं। पास बैठे आदमी से भी इतने जोर से बोलते हैं, जैसे किसी सभा मे बिना माइक बोल रहे हो। होटल के बोर्ड पर लिखा है—'यहा चाय हर वक्त तैयार मिलती है।' नासमझ आदमी चाय माग बैठता है और सरदार जी कहते हैं—चाय ही बेचना होता तो उसे बोर्ड पर क्यू लिखता बाश्शाओ! इधर नेक बच्चो के लिए कोई चाय नही है। समझदार 'चाय' का मतलब समझते है और बठते ही कहते हैं—एक चवन्नी!

सरदारजी मुहल्ले के रखवाले हैं। इधर के हर आदमी का चरित्र वे जानते हैं। अजनबी को ताड लेते है। तदूर मे सलाख मारते हुए चिल्लाते हैं—

—वो दो बार ससुराल मे रह आया है जी। ज़रा बच के।

—उसके घर मे दो हैं जी। किसीके गले मे डालना चाहता है। ज़रा बच के बाश्शाओ!

—दो जचकी उसके हो चुकी हैं। तीसरी के लिए बाप के नाम की तलाश ज़ारी है। ज़रा बच के।

—उसकी खादी पर मत जाणाजी। गाधी को फुटकर बेचता है। ज़रा बच के।

उस आदमी को मेरे साथ दो तीन बार देखकर सरदारजी ने आगाह किया था—वह पुराना खिलाडी है। ज़रा बच के।

जिसे पुराना खिलाडी कहा था, वह ३५-४० के बीच का सीधा आदमी लगता था। हमेशा परेशान। हमेशा तनाव मे। कई आधुनिक कवि उसमे तनाव उधार मागने आते होंगे। उसमे बचने लायक कोई बात मुझे नही लगती थी।

एक दिन वह अचानक आ गया था। पहले से बिना बताए, बिना घटी बजाए, बिना पुकारे, वह दरवाज़ा खोलकर घुसा और कुर्सी पर बठ गया। बदतमीज़ी पर मुझे गुस्सा आया था। बाद मे समझ गया कि इसने बदतमीज़ी का अधिकार इसलिए हासिल कर लिया है कि वह अपने काम से मेरे पास नही

आता। देश के काम से आता है। जो देश का काम करता है, उसे थोड़ी बदतमीज़ी का हक है। देश सेवा थोड़ी बदतमीज़ी के बिना शोभा भी नहीं देती। थोड़ी बेवकूफी भी मिली हो, तो और चमक जाती है।

वह उत्तेजित था। उसने अपना बस्ता टेबिल पर पटका और सीधे मेरी तरफ घूरकर बोला—तुम कहते हो कि बिना विदेशी मदद के योजना चला लोगे। मगर पसा कहा से लाओगे? है तुम्हारे पास देश मे ही साधन जुटाने की कोई योजना?

वह जवाब के लिए मुझे घूर रहा था और मैं इस हमल से उखड गया था। योजना की बात मैंने नही अथ मन्त्री ने कही थी। वह अथ मत्री से नाराज़ था। डाट मुझे पड रही थी।

उत्तेजना मे उसने तीन कुर्सिया बदली। बस्ते से पुलिन्दा निकाला। बोला—जीभ उठाकर तालू से लगा देते हो। लो, आतरिक साधन जुटाने की यह स्कीम।

घटा भर अपनी योजना समझाता रहा। कुछ हल्का हुआ। पुलिंदा बस्ते मे रखा और चला गया।

हफ्ते भर बाद वह फिर आया। वसे ही तनाव मे। भड से दरवाज़ा खोला। बस्ते को टेबिल पर पटका और अपने को कुर्सी पर। बोला—तुम कहते हो रोड ट्रा सपोर्ट के कारण रेलवे की आमदनी कम हो रही है। मगर कभी सोचा है, मोटर ट्रकवाले माल भेजनेवालो को कितने सुभीते देते हैं? लो यह स्कीम। इसके मुताबिक काम करो।

उसने रेलवे की आमदनी बढाने के तरीके मुझे समझाए।

वह जब-तब आता। मुझे किसी विभाग का मत्री समझकर डाटता और फिर अपनी योजना समझाता। उसने मुझे शिक्षा मत्री, कृषि मत्री विदेश मत्री सब बनाया। उसे लगता था वह सब ठीक कर सकता है लेकिन विवश है। सत्ता उसके हाथ मे है नही। उससे जो बनता है, करता है। योजना और सुझाव भेजता रहता है।

देश के लिए इतना दुखी आदमी मैंने दूसरा नही देखा। सडक पर चलता, तो दूर से ही दुखी दिखता। पास पहुचते ही कहता—रिज़र्व बक के गवनर का बयान पढा? सारी इकानमी को नष्ट कर रहे हैं ये लोग। आखिर यह क्या हो

रहा है ? ज़रा प्रधानमंत्री से कहो न !

सरदारजी ने फिर आगाह किया—बहुत चिपकने लगा है। पुराना खिलाड़ी है। ज़रा बच के।

मैंने कहा—मालूम होता है उसका दिमाग खराब है।

सरदारजी हँसे। बोले—दमाग ? अजी दमाग तो हमारा आपका खराब है जो दिन भर काम करते हैं, तब खाते हैं। वह १० सालों से बिना कुछ किए मज़े में दिल्ली में रह रहा है। दमाग तो उसका आला दर्जे का है।

मैंने कहा—मगर वह दुखी है। रात दिन उसे देश की चिन्ता सताती रहती है।

सरदारजी ने कहा—अजब मुल्क है ये। भगवान ने इसे सट्टा खेलते-खेलते बनाया होगा। इधर मुल्क की फ़िक्र में से भी रोटी निकलती है। फिर मैं आप से पूछता हूँ, पिद्दी का कितना शोरवा बनता है ? बताइए, कुछ अंदाज़ दीजिए। मुल्क की फ़िक्र करते-करते गांधी और नेहरू जैसे चले गए। अब यह पिद्दी क्या सुधार लेगा ? इस मुल्क को भगवान ने खास तौर से बनाया है। भगवान की बनाई चीज़ में इंसान सुधार क्यों करे ? मुल्क सुधरेगा तो भगवान के हाथ से ही सुधरेगा। मगर इस इंसान से ज़रा बच के। पुराना खिलाड़ी है।

मैंने कहा—पुराना खिलाड़ी होता तो ऐसी हालत में रहता ?

सरदारजी ने कहा—उसका सबब है। वह छोटे खेल खेलता है। छोटे दाव लगाता है। मैंने उसे समझाया कि एक दो बड़े दाव लगा और माल समेटकर चैन की बंसी बजा। मगर उसकी हिम्मत ही नहीं पड़ती।

सरदारजी मुझे उससे बचने के लिए बार-बार आगाह करते, पर खुद उसे कभी नाश्ता करा देते, कभी रोटियाँ दे देते, कभी रुपये दे देते। मैंने पूछा, तो सरदारजी ने कहा—आखिर इंसान है। फिर उसके साथ बीवी भी है। उसने वह कमाल कर दिखाया है जो दुनिया में किसीसे नहीं हुआ—उसने बीवी को यह मनवा लिया है कि वह देश की किस्मत पलटने के लिए पैदा हुआ है। वह कोई मामूली काम करके ज़िंदगी बरबाद नहीं कर सकता। उसका एक मिशन है। बीवी खुद भी भगवान से प्रार्थना करती है कि उसके घरवाले का मिशन पूरा हो जाए।

वह दिन पर दिन ज़्यादा परेशान होता गया। जब-तब मुझे मिल जाता और

किसी मंत्रालय की शिकायत करता।

अचानक वह गायब हो गया। ८-१० दिन नहीं दिखा, तो मैंने सरदारजी से पूछा। उन्होंने कहा—डिस्टर्ब मत करो। बड़े काम में लगा है।

मैंने पूछा—कौन काम?

सरदारजी ने कहा—उसकी तफसील में मत जाओ। बम बना रहा है। इन्कलाबी काम कर रहा है। एक दिन वह सरकार के सिर पर बम पटकने वाला है।

मैंने कहा—सच, वह बम बना रहा है?

सरदारजी ने कहा—हां जी, वह नया कान्स्टीट्यूशन बना रहा है। उसे सरकार के सिर पर दे मारेगा। दुनिया पलट देगा, बादशाओ।

एक दिन वह मंत्रिधान लेकर आ गया और दुबला हो गया था। मगर चेहरा लाल था। फरिश्ते की तरह बोला—नथिंग विल चेंज अंडर दिस कांस्टीट्यूशन। संविधान बदलना ही पड़ेगा। इस देश को बुनियादी क्रांति चाहिए और बुनियादी क्रांति के लिए क्रांतिकारी संविधान चाहिए। मैंने नया संविधान बना लिया है।

बस्ते से उसने पुलिंदा निकाला और मुझे संविधान समझाने लगा—यह प्रीएम्बल है—यह फण्डामेंटल राइट्स का खण्ड है। इस संविधान में एक बुनियादी क्रांति की बात है। देखो, मनुष्य ने अपने को राज्य के हाथों क्यों सौंपा था? इसलिए कि राज्य उसका पालन करे। राज्य का यह कर्तव्य है। मगर राज्य आदमी से काम करवाना चाहता है। यह गलत है। बिना काम किए आदमी का पालन होना चाहिए। मैं जो पिछले १० सालों से कुछ नहीं कर रहा हूं, सो मेरा प्रोटेस्ट है। मैं राज्य पर नैतिक दबाव डालकर उसका कर्तव्य कराना चाहता हूं। मैं जानता हूं, लोग मेरे बारे में क्या कहते हैं। आई डोन्ट माइंड। छोटे लोग हैं। मेरे मिशन को नहीं समझ सकते।

मैंने कहा—कोई काम नहीं करेगा, तो उत्पादन नहीं होगा। तब राज्य पालन कैसे करेगा?

उसने समझाया—आप आदमी को नहीं जानते। वह मना करने पर भी काम करता है। यह उसकी मजबूरी है। मैन इज बॉर्न टु वर्क। अगर राज्य कह भी दे कि कोई काम मत करो, तुम्हारा पालन हम करेंगे, तब भी लोग

काम मागेंगे। साधारण आदमी ऐसा ही होता है। इने गिने मुख्य आप जैसे लोग होंगे जो काम नहीं करेंगे। हमारा पालन उन घटिया बहुसख्यको के उत्पादन से होगा।

वह अपने सविधान से बहुत सतुष्ट था। एक दिन वह एक फोटोग्राफ लेकर आया। फोटो मे वह सविधान प्रधानमत्री को दे रहा है। बोला—मैंने सविधान प्रधानमत्री को दे दिया। उन्होने आश्वासन दिया है कि जल्दी ही इसे लागू किया जाएगा।

सरदारजी ने कहा—आजकल फोटो पर जिन्दा है। प्रधानमत्री से मिल आया है। उसकी बीवी घर भाग रही थी, सो थम गई है। इस फोटो को अच्छे धधे मे लगाए तो अच्छी कमाई कर सकता है। मगर वह जिन्दगी भर, 'रिटेल' करता रहेगा।

२-३ महीने उसने इतजार किया। सविधान लागू नही हुआ। वह अब फिर परेशान हो गया। कहता—यह सरकार झूठ पर जिंदा है। मुझे प्रधानमत्री ने आश्वासन दिया था कि जल्दी ही वे मेरा सविधान लागू करेंगे, पर अभी तक ससद को सूचना नहीं दी। अधेर है। मगर मैं छोडूगा नही।

एक दिन सरदारजी ने बताया—पुराना खिलाडी ससद् के सामने अनशन पर बैठ गया है। राम धुन लग रही है। बीवी गा रही है—सबको सन्मति दे भगवान। इसे सबकी क्या पडी है? यही क्यो नही कहती कि मेरे घर वाले को सन्मति दे भगवान!

तीसरे दिन उसे देखने गया। वह दरी पर बैठा था। उसका चेहरा सौम्य हो गया था। भूख से आदमी सौम्य हो जाता है। तमाशाइयो को वह बडी गम्भीरता से समझा रहा था—देखो, इसान आजाद पदा होता है, मगर वह हर जगह जजीरो से जकडा रहता है। मनुष्य ने अपने को राज्य को क्यो सौपा? इसलिए न, कि राज्य उसका पालन करेगा। मगर राज्य की गर जिम्मेदारी देखिए कि मुझ जैसे लोगो को राज्य ने लावारिस की तरह छोड रखा है। 'नथिंग विल चेंज अडर दिस कान्सटीटयूशन', मेरा सविधान लागू करना ही होगा। लेकिन इसके पहले राज्य को फौरन मेरे पालन की व्यवस्था करनी होगी। यही मेरी मागे हैं।

सरदारजी ने उस दिन कहा था—बिजली मडरा रही है बादशाओ!

देखो किसके सिर पर गिरती है। जरा बच के।

सरकार की तरफ से उसे धमकी दी जा रही थी। घर जाने के लिए किराये का लोभ भी दिया जा रहा था। मगर वह अपना संविधान लागू करवाने पर तुला था।

सातवें दिन सुबह जब मैं बैठा अखबार पढ़ रहा था, वह अचानक अपनी बीवी के सहारे मेरे घर में घुस आया। पीछे कुली उसका सामान लिए थे। उसने मुझे मना करने का मौका ही नहीं दिया। वह अपने घर की तरह इत्मीनान से घुस आया था।

मेरे सामने वह बैठ गया। आखें धस गई थी। शरीर में हड्डियां रह गई थी। मैं भौंचक उसे देख रहा था। वह इस तरह मेरे घर में घुस आया था कि मुझसे कुछ कहते नहीं बन रहा था। मगर उसके चेहरे पर सहज भाव था।

धीरे धीरे बोला—प्रधानमंत्री ने आश्वासन दे दिया है।

मैं कुछ नहीं बोल सका।

वह बोला—कमजोरी बहुत आ गई है।

कुछ ऐसा भाव था उसका जैसे मेरे लिए प्राण दे रहा हो। कमजोरी भी उसे मेरे लिए आई हो।

उसने बीवी से कहा—उस कमरे में कुछ दिन रहने का जमा लो।

मेरी बोलती बंद थी। उसने अचानक हमला कर दिया था। मुझे लगा, जैसे किसीने पीछे से मेरी कनपटी पर ऐसा चांटा जड़ दिया है कि मेरी आंखों में तितलियां उड़ने लगी हैं। उसने मना करने की हालत भी मेरी नहीं रहने दी। मैं मूढ़ की तरह बैठा था और वह बगल के कमरे में जम गया था।

थोड़ी देर बाद वह आया। बोला—जरा एक दो सेर अच्छी मुसम्मी मंगा दो।

यह कहकर वह चला गया। मैं सोचता रहा—इसने मुझे किस कदर अपाहिज बना दिया है। इस तरह मुसम्मी मंगाने के लिए कहता है, जैसे मैं इसका नौकर हूं और इसने मुझे पैसे दे रखे हैं।

मैंने मुसम्मी मंगा दी।

वह मेरे नौकर को जब तब पुकारता और हुक्म दे देता—शक्कर ले

आओ ! चाय ने आओ ! उसने मुझे अपने ही घर मे अजनबी बना दिया था।

वह दिन मे दो बार मुझे दर्शन देने निकलता। कहता—वीकनेस अभी काफी है। १० १५ दिन मे निकलेगी। जरा दो तीन रुपये देना।

मैं रुपय दे देता। बाद मे मुझे अपने पर खीझ आती। मैं किस कदर सत्व हीन हो गया हू। मैं मना क्यो नही कर देता ?

चौथे दिन सरदारजी ने कहा—घुस गया घर म बाश्शाओ। मैंने पहले कहा था—पुराना खिलाडी है, जरा बच के। छह महीने से पहले नही निकलेगा। यही उसकी तरकीब है। जब वह किसी मकान से निकाला जाता है, तो कोई 'इशू' लेकर अनशन पर बैठ जाता है और उसी गिरी हालत मे किसी के घर मे घुस जाता है।

मैंने कहा—उसकी हालत जरा ठीक हो जाए तो मैं उसे निकाल बाहर करूगा।

सरदारजी ने कहा—नही निकाल सकते। वह पूरा वक्त लेगा।

जब वह चलने फिरने लायक हो गया, तो सुबह शाम खुले मे वायु-सेवन के लिए जाने लगा। लौटकर मेरे पास दो घडी बैठ जाता। कहता—प्राइम मिनिस्टर अब जरा सीरियस हुए हैं। एक कमेटी जल्दी ही बैठनेवाली है।

एक दिन मैंने कह —अब आप दूसरी जगह चले जाइए। मुझे बहुत तकलीफ है।

उसने कहा—हा, हा, प्रधानमत्री का पी० ए० मकान का इतजाम कर रहा है। होते ही चला जाऊगा। मुझे खुद यहा बहुत तकलीफ है।

उसमे न जाने कहा का नतिक बल आ गया था कि मेरे घर मे रहकर, मेरा सामान खाकर, वह यह बताता था कि मुझपर एहसान कर रहा है। कहता है—मुझे खुद यहा बहुत तकलीफ है।

सरदार जी पूछते हैं—निकला ?

मैं कहता हू—अभी नही।

सरदार जी कहते हैं—नहीं निकलेगा। पुराना खिलाडी है।

मैंने कहा—सरदारजी, आपके यहा इतनी जगह है। उसे वहो कुछ दिन रख लीजिए।

सरदार जी ने कहा—उसके साथ औरत है। अकेला होता, तो कहता,

पड़ा रहा। मगर औरत ! औरत के डर से तो पंजाब से भागकर आया और तुम इधर औरत ही यहां डालना चाहते हो।

उसके रवैये म कोई फर्क नही पडा। सुबह स्नान-पूजा के बाद वह नाश्ता करता। फिर पोर्टफोलियो लेकर निकल जाता। जाते जाते मुझसे कहता—जरा ससदीय मामलो के मत्री से मिल आऊ।

आखिर मैंने सख्ती करना शुरू किया। सुबह शाम उसे डाटता। उसका अपमान करता। उसके चेहरे पर शिकन नही आती। कभी वह कह देता—मैं अपमान का बुरा नही मानता। मुझे इसकी आदत पड चुकी है। फिर जिस महान् 'मिशन' म मैं लगा हुआ हू, उसे देखते छोटे छोटे अपमानो की अवहेलना ही करनी चाहिए।

कभी जब वह देखता कि मेरा 'मूड' बहुत खराब है, तो वह बात करना टाल जाता। कागज पर लिख देता—आज मेरा मौन व्रत है।

आखिर मैंने पुलिस की मदद लेने का तय किया। उसने कागज पर लिख दिया—आज मेरा मौन व्रत है।

मैंने कहा—तुम मौन व्रत रखे रहो। कल पुलिस सामान बाहर फेंक देगी।

उसने मौन व्रत फौरन त्याग दिया और मुझे मनाता रहा। कहा—३ ४ दिनो म कही रहने का इन्तजाम कर लूगा।

सुबह वह तैयार होकर निकला। मुझसे कहा—एक जगह रहने का इत जाम कर रहा हू। जरा पाच रुपये दीजिए।

मैंने कहा—पाच रुपये किसलिए ?

उसने कहा—जगह तय करने जाना है न। स्कूटर से जाऊगा।

मैंने कहा—बस मे क्यों नही जाते ? मैं रुपया नहीं दूगा।

उसने कहा—तो मैं नही जाता। यही रहे जाऊगा।

मैंने पस्त होकर उसे पाच रुपये दे दिए।

शाम को वह लौटा और बोला—मैं दूसरी जगह जा रहा हू। आपको एक महीने म ही छोड दिया। किसीका घर मैंने ६ महीने से पहले नही छोडा। एक तरह से आपके ऊपर मेरा अहसान ही है। जरा २५ रुपये दीजिए।

मैंने कहा—पच्चीस रुपये किसलिए ?

वह बोला—कुली को पैसे देने पडेंगे। फिर नई जगह जा रहा हू। २४ दिनो का खाने का इतजाम तो होना चाहिए।

मैंने कहा—यह मेरी जिम्मेदारी नही है। मेरे पास रुपये नही हैं।

उसने शाति से कहा—तो फिर आज नही जाता। जिस दिन आपके पास पच्चीस रुपये हो जाएगे, उस दिन चला जाऊगा।

मैंने पच्चीस रुपय उसे फौरन दे दिए। उसने सामान बाहर निकलवाया। बीवी को बाहर निकाला। फिर मुझसे हाथ मिलाते हुए बोला—कुछ ख्याल मत कीजिए। नो इल विल! मैं जिस मिशन मे लगा हू उसमे ऐसी स्थितिया आती ही रहती है। मैं बिलकुल फील नही करता।

मैं बाहर निकला, तो सरदार जी चिल्लाए—चला गया?

मैंने कहा—हा, चला गया।

वे बोले—कितने मे गया?

मैंने कहा—पच्चीस रुपये म।

सरदार जी ने कहा—सस्ते मे चला गया। सौ रुपये से कम मे नही जाता वह।

पुराना खिलाडी अब भी कभी-कभी कही मिल जाता है। वैसा ही परेशान, वैसा ही तनाव। वह भूल गया है कि कभी मैंने उसे जबरदस्ती घर से निकाला था।

कहता है—प्रधानमत्री की अक्ल पर क्या पाला पड गया? कहते हैं कि हम किसी भी स्थिति मे रुपये को 'डिवैल्यू' नही करेंगे। मैं कहता हू, डिवैल्यू नही करोगे, तो दुनिया के बाजार से निकाल नही दिए जाओगे। जरा प्रधान मत्री को समझाइए न!

वह चिन्ता करता हुआ आगे बढ जाता है।

समय काटनेवाले

मैं वह पत्थर हूं, जिसपर कोई भी अपने न कटनेवाले समय को पटक पटककर
मार डालता है। कुछ लोग मेरा यह पत्थरी उपयोग नियमित रूप से करते हैं
और मैं होने देता हूं। मैं जानता हूं वे घर में पूरी ईमानदारी के साथ समय
काटने की कोशिश करते हैं पर समय फिर भी बच जाता है तो उसे झोले में
डालकर मुझ जसे के गास चले आते हैं और उसे जोर जोर से मेरे ऊपर पछा
डने लगते हैं। समय जब तार तार होकर मर जाता है, तो वे प्रसन्न और
हल्के होकर चले जाते हैं और मैं अपने चुटीले सिर को देर तक सहलाता
रहता हूं और सोचता हूं—सरप्लस समय के कपड को पछाडने के लिए मैं धोबी
के पत्थर से ज्यादा कुछ नहीं हूं।

पर समय रोज पैदा हो जाता है और उसे रोज मारना पडता है। समय
को न मारो तो वह अपने को मार डालता है। ऐसी क्या कोई तरकीब नही
है कि सारे समय को एक बार ही ऐसा मार डाला जाए कि वह फिर पैदा न
हो? एक सत्याग्रही ने मुझे बताया कि है। कहने लगे—जेल मे मैं जासूसी
किताब पढ रहा था। विनोबा ने देखा तो पूछा—क्या अध्ययन कर रहे हो?
मैंने कहा—जासूसी किताब पढ़ रहा हूं। बाबा ने पूछा—इसे क्यों पढ़ते हो?
मैंने जवाब दिया—समय काटने के लिए। विनोबा ने कहा—हूं समय तुम्हारी
समस्या है। ऐसा करो न, इस खभे पर सिर दे मारो। सारा समय एकबारगं
कट जाएगा।

सलाह नेक है। मगर ऐसी थोक काट विरले ही करते हैं। अक्सर लोग
फुटकर समय काटते हैं।

ऐसे एक ताजा समय काटनहार मेरे पास जब-तब आ जाते हैं। रिटायड
आदमी हैं। एक्सटेंशन न मिले, उसे रिटायड आदमी कहते हैं। एक्सटेंशन
की अवधि से ही यह टूटने लगता है। मातहत आपस मे कहते हैं—बुड्ढा
एक्सटेंशन पर चल रहा है। मिनिस्ट्री बदली कि गए। एक्सटेंसन वाला आठों
पहर अनुभव करता है कि वह रेत के ढेर पर बठा है।

वे सज्जन कहीं से रिटायर होकर यहीं बेटों के पास आकर रहने लगे हैं। पढ़े लिखे आदमी हैं। साहित्य-प्रेमी है। साहित्य-प्रेमी के लिए मैं बकरा हू। चाहे जब हलाल किया जा सकता हू। वे अच्छी बातें करत रहे। अच्छी बातें ऊब देती हैं मैंने 'हिंट' देना शुरू किया। टालने के लिए मेरे पास कई तरकीबें हैं। तमाखू खाकर पीक मुह म भर लेता हू। बोलता ही नहीं। तमाखू मेरी रक्षक है। अगर तमाखू खाने की आदत न होती तो मुह बन्द रखने के लिए बच्चो की 'फीडिंग बाटल' मुह मे रखनी पड़ती। तमाखू से सामने वाला न उठे तो एकाएक उदास और गुमसुम हो जाता हू जैसे ससार का नाश साफ देख रहा हू। या दार्शनिक मुद्रा मे बैठ जाता हू—असार ससार मे दो घड़ी बोल भी लिए तो क्या होता है! जाइए। उन्होंने कोई 'हिंट' स्वीकार नहीं किया। तब मैंने पूछा—कहा जाने का इरादा है? यह प्रश्न तुरुप का इक्का है। इसका मतलब है कि आप जा कहीं और रहे है, यहा तो यों ही टपक पड़े। इस अर्थ को समझकर आदमी उठ जाता है। मगर आप को यह प्राणघातक जवाब भी मिल सकता है—कहीं नहीं। आपके पास तक ही आया था। वे सज्जन यह कहकर, कि जरा बाजार जाना है, उठ गए। एकाध मिनट बाद मैं भी पान खाने चौराहे की तरफ चला। मैंने देखा, वे चौराहे पर खड़ हुए तय नहीं कर पा रहे हैं कि कहा जाए। वे कभी बाईं तरफ की सड़क पर मुड़ते। फिर लौटकर चौराहे पर आकर दायें मुड़ जाते। पर फिर लौट पड़ते। २ ३ मिनट उन्हें यह तय करने मे लगे, कि किस तरफ किसके पास जाए। बाकी वक्त वहा गुजार दें। उन्ह किसीका ख्याल आता और वे एक सड़क पर चल देते। २ ४ कदम चलने पर सोचते—वह शायद घर पर न हो। व लौट पड़ते और दूसरे आदमी के घर की तरफ बढ़ते। फिर कुछ सोचकर लौट पड़ते।

मुझे बहुत दया आई। सोचा, इन्हें लौटा लू और कहू, कि जब तक बैठना हो बैठे। पर तभी आत्मरक्षा की भावना तीव्र हुई। मुझे काम भी करना था। दया की भी शर्तें होती हैं। एक दिन एक गाय तार मे फस गई थी। उसकी तड़प से मैं द्रवित हो गया। सोचा, इसे निकाल दू। पर तभी डरा, कि निकलते ही यह खीझ मे मुझे सीग मार दे तो! मैं दया समेत उसे देखता रहा। वृद्ध सज्जन मुझे ठीक उस गाय की तरह लगे जो त्रासदायी खाली समय के

कटीले तारो मे फसे थे। मैं उन्हें निकाल सकता था, पर निकाल नही रहा था। दया की भी शर्तें होती हैं। 'सोसायटी फार दी प्रिवेंशन आफ क्रुएल्टी टु एनि मल्स' याने जानवरो पर होनेवाली क्रूरता पर रोक लगानेवाले सगठन के एक सदस्य ने बर्फ तोडने के कीले से काच कोचकर अपनी बीवी को मार डाला था। दया की शर्तें होती हैं। हर प्राणी दया का पात्र है, बशर्ते वह अपनी बीवी न हो।

वे जब तब मेरे पास आने लगे। यह अजब बात है, कि जिसपर दया आए उससे डर भी लगे। एक शाम वे मुझे बस स्टेशन पर खोमचे के पास खड़े चाट खाते दिख गए। मेरी दया और बढ गई। उन्हें घर मे इच्छानुकूल खाने को न मिलता होगा। वृद्धा आदमी चटोरा हो जाता है। मेरे एक रिश्तेदार अतिम सासें ले रहे थे। बेटो ने कहा—बाबूजी, राम नाम लो। दान पुण्य करना हो तो कर दो। कुछ इच्छा हो तो बताओ। उन्होने न राम का नाम लिया, न दान किया। बोले—भैया, मुझे आलूबडा खिला दो।

एक दिन वे मेरे पास बैठे थे कि विश्वविद्यालय के दो छात्र नेता आ गए। वे युवा असतोष पर मुझसे बातें करने लगे। रिटायर्ड सज्जन बीच मे ही बोलने लगे। वे लडको को उपदेश देने लगे। लडको ने कहा, जरा आप हम बात कर लेने दीजिए। वे चुप हो गए। लडके चले गए, तो वे बोले—हमारा जिंदगी भर का अनुभव है। उस अनुभव के आधार पर हम कुछ कहते हैं, तो ये लडके सुनते क्यो नही? मैंने कहा, शायद इसलिए कि अनुभवो के अर्थ बदल गए हैं। वे समझ गए। उदास हो गए। कहने लगे—हमारी तो पूरी जिंदगी दबते हुए गुजर गई। जब हम जवान थे, तब यह मान्यता थी कि बडो से दबो। तो अब हम हम तब बुजुर्गों से दबे। अब यह हो गया कि लडको से दबो। तो अब हम बुढ़ापे मे लडको से दब रहे हैं। हमारी जिंदगी तो दबते हुए गुजर गई।

रिटायर्ड आदमी की बडी ट्रेजेडी होती है। व्यस्त आदमी को अपना काम करने मे जितनी अक्ल की जरूरत पडती है, उससे ज्यादा अक्ल बेकार आदमी को समय काटने मे लगती है। रिटायर्ड वृद्ध को समय काटना होता है। वह देखता है कि जिंदगी भर मेरे कारण बहुत कुछ होता रहा है, पर अब मेरे कारण कुछ नही होता। वह जीवित सन्दर्भों से अपने को जोडना चाहता है, पर जोड नहीं पाता। वह देखता है कि मैं कोई हलचल पैदा नहीं कर पा

रहा हू । छोटी-सी तरग भी मेरे कारण जीवन के इस समुद्र मे नही उठ रही है। हमारे चाचा जब जब इस नकुछपन से ग्रस्त होते, परिवार मे लडाई करवा देते । खाना खाते खाते चिल्लाते—दाल मे क्या डाल दिया ? कडवी लगती है । मुझे मार डालोगे क्या ? हम कहते—दाल तो बिलकुल ठीक है । वे कहते—तो क्या मैं झूठ बोलता हू ! भगवान की कसम ! परिवार मे आपस मे लडाई मच जाती । हम देखते कि हम लड रहे है, पर चाचा आराम से सो रहे हैं । तूफान खडा कर देने मे सफलता से उन्हें अपने अस्तित्व और अथ का बोध होता और मन को चैन मिलती ।

हाल ही मे रिटायड एक सज्जन मिले । मैंने पूछा—वक्त कैसे कटता है ? वे बताने लगे—भगवान ने फुरसत दी है, तो ४ घटे तो उनकी पूजा करते हैं । मुझे भगवान पर दया आई । सवशक्ति मान की भी मेरी जैसी गत ४ घट रोज होती है । यो वे ठीक ही कहते हैं, कि भगवदभजन या और कोई अच्छा काम फुरसत मे ही किया जाता है । फुरसत ही नहीं है, तो आदमी अच्छे काम कसे करे ?

भगवान से लेकर बेटे, नाती पोते तक वक्त काटने के काम आते हैं । मेरे पडोस का लडका बेकार था । वक्त उसका कटता नही था । उसके पिता के दोस्त रिटायर हुए । उनकी भी समस्या समय थी । दोनो एक-दूसरे का वक्त काटने लगे । उम्र का फक मिट गया । वे बराबरी के हो गए । बुढऊ दोपहर को आ जाते और शाम तक बातें करते । बातो के विषय खेती बाडी से लेकर बारातो के अनुभव तक होते । एक दिन मैंने सुना, वे दोनो खूब जोर से लड रहे हैं । बुढऊ कह रहे हैं—हमे मत सिखाओ । हम जिंदगी भर तमाखू खाते हो गया । लडका बोला—तुम्हें जिंदगी हो गई तो हम भी १० साल से तमाखू खा रहे हैं । हम भी कुछ जानते है ।

मुद्दा क्या था झगड का ? कुल यह कि चूने मे मक्खन डालना चाहिए या नही, और डालना चाहिए तो कितना और किस तरह । उस दिन जब शाम को दोनो अलग हुए तो और दिनो से ज्यादा खुश थे, क्योंकि लड लिए थे ।

मेरे पास ही एक भले आदमी रहते थे । उनके ससुर रिटायर हुए तो कुछ महीनो के लिए लडकी-दामाद के पास रहने को आ गए । वे गणित के अध्यापक थे । मेरे रिश्तदार होते थे । वे मेरे पास आकर बैठ जाते । घटो

परिवार और रिश्तेदार और महगाई की बात करते। मुझे अखरने लगा। एक दिन जब वे आए तो मैंने उनके बोलने के पहले ही अतर्राष्ट्रीय बात शुरू कर दी। कहा—देखिए, इसराइल ने अरब गणराज्य पर हमला कर दिया। जियानवादी राज्य की स्थापना का वायदा १९१७ मे ब्रिटिश विदेश सचिव लाड बलफुट ने कर दिया था। ५-७ मिनट तक जब मैं अरब इसराइल सम्बध और शीतयुद्ध की बात करता रहा ता वे ऊब उठे। इस सबसे उनका वास्ता ही नही था। वे उठे। बोले—जरा नहा लू। मैंने अतर्राष्ट्रीय राजनीति से उन्हें टहलवा दिया। दो तीन दिन यह नुस्खा आजमाने के बाद या तो आए नही, आते भी तो ५ १० मिनट ही बठते। वे डरते कि ज्यादा बैठा ता यह दुष्ट अतर्राष्ट्रीय राजनीति की बात शुरू कर देगा।

मगर अब उनके बेटी दामाद परेशान रहने लगे। मैंने उन्ह सलाह दी कि इन्हे किसी काम मे लगा दो। कहो कि बाबूजी, मुन्ना गणित म कमजोर है, इसे पढ़ा दिया करिए। गणित के अध्यापक की यह कमजोरी है। वह दुनिया म किसीको गणित मे कमजोर नही देख सकता। मैंने देखा, वे नाती को गणित पढाने लगे हैं और खुश हैं। पर एक दिन लडका रोकर बोला—ये नानाजी तो हमे गणित पढा-पढाकर मारे डाल रहे हैं। वे लडके के पीछे पड गए थे।

अब मैं बुजुर्गों से डरने लगा हू। पर वे नाराज न हो। मैं उनका मजाक नही उडा रहा हू। उनकी तकलीफ समझने की कोशिश कर रहा हू। रिटायर्ड आदमी की यह समस्या मानवीय और सामाजिक है। समाज का एक हिस्सा हमेशा गिरे मन का, नकुछपन के बोध से भरा सिर्फ समय का बोझ ढोता रहे, यह अच्छा नही। समाज का भविष्य इस बात पर निर्भर है कि वह अपने रिटायर्ड लोगों का क्या करता है। अगर कुछ नही करता तो रिटायर्ड वृद्ध काम करते युवा के काम में दखल देगा और समाज की कम शक्ति घटेगी।

युवा इजीनियर काम कर रहा है। तभी रिटायर्ड इजीनियर आ जाएगे और कहगे—क्या हो रहा है। हू। हमारे जमाने म ऐसी मशीनें नही होती थीं। वे अपने जमाने की मशीन को मार डालेंगे। पुरानी मशीन से नई मशीन की रक्षा करनी पडती। पुरानी मशीन का किसी काम मे लगाना पडेगा। काम न मिले तो कम से कम यह तो हो ही सकता है कि पुरानी मशीनें एक दूसरी का जग साफ करते, वक्त गुजार दें।

एक पुरानी पोथी मे मुझे ये दो प्रसग मिले हैं। भक्तो के हिताथ दे रहा हू। इन्हें पढकर राम और हनुमान-भक्तों के हृदय गद्गद हो जाएगे। पोथी का नाम नहीं बताऊगा क्योंकि चुपचाप पोथी पर रिसच करके मुझे पी एच० डी० लेनी है। पुराने जमाने मे लिखे कोई दस पन्ने भी किसीको मिल जाए तो उसे मजे मे उनकी व्याख्या से डाक्टरेट मिल जाती है। इस पोथी में ४० पन्ने हैं—याने चार डाक्टरेटो की सामग्री है। इस पोथी से रामकथा के अध्ययन म एक नया अध्याय जुडता है। डा० कामिल बुल्के भी इसमे फायदा उठा सकते हैं।

(१) प्रथम साम्यवादी

पोथी मे लिखा है—

जिस दिन राम रावण को परास्त करके अयोध्या आए, सारा नगर दीपो से जगमगा उठा। यह दीपावली पव अनन्त काल तक मनाया जाएगा। पर इसी पव पर व्यापारी खाता-वही बदलते हैं और खाता वही लाल कपडे मे बाधी जाती है।

प्रश्न है—राम के *अयोध्या आगमन मे खाता वही बदलने का क्या सम्बध?* और खाता वही लाल कपडे मे ही क्यो बाधी जाती है?

बात यह हुई कि जब राम के आने का समाचार आया तो व्यापारी वग म खलबली मच गई। वे कहने लगे—सेठजी, अब बडी आफत है। शत्रुघ्न के राज मे तो पोल चल गई। पर राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। वे सेल्स टैक्स और इनकम टैक्स की चोरी बरदाश्त नही करेंगे। वे अपने खाता वही की जाच कराएगे और अपने को सजा होगी।

एक व्यापारी ने कहा—भैया, तब तो अपना नम्बर दो का मामला भी पकड़ लिया जाएगा।

अयोध्या के नर-नारी तो राम के स्वागत की तैयारी कर रहे थे, मगर

व्यापारी वग घबडा रहा था ।

अयोध्या पहुचने के पहले ही राम को मालूम हो गया था कि उधर बडी पाल है । उन्होने हनुमान को बुलाकर कहा, सुनो पवनसुत, युद्ध तो हम जीत गए लका म, पर अयोध्या मे हम रावण से बड शत्रु का सामना करना पडगा —वह है, व्यापारी वग का भ्रष्टाचार । बडे-बडे वीर व्यापारी के सामने परास्त हो जाते हैं । तुम अतुलित बल बुद्धि निधान हो । मैं तुम्हे 'एनफोसमट ब्राच' का डाइरेक्टर नियुक्त करता हू । तुम अयोध्या पहुचकर व्यापारियो की खाता बहियो की जाच करो और झूठे हिसाब पकडो । सख्त से सख्त सजा दो ।

इधर व्यापारियो म हडकप मच गया । कहने लगे—अरे भैया, अब तो मरे । हनुमानजी एनफोसमेट ब्राच के डाइरेक्टर नियुक्त हो गए । बडे कठोर आदमी हैं । शादी-ब्याह नहीं किया । न बाल, न बच्चे । घूस भी नही चलेगी ।

व्यापारियो के कानूनी सलाहकार बैठकर विचार करने लग । उन्होने तय किया कि खाता बही बदल देना चाहिए । सारे राज्य मे 'चेम्बर आफ कामस' की तरफ से आदेश चला गया कि ऐन दीपोत्सव पर खाता बही बदल दिए जाए ।

फिर भी व्यापारी वग निश्चित नही हुआ । हनुमान को धोखा देना आसान बात नही थी । वे अलौकिक बुद्धि सम्पन्न थ । उन्हे खुश कैसे किया जाए ? चर्चा चल पडी—

—कुछ मुटठी गरम करने से काम नही चलेगा ?

—वे एक पैसा नही लेत ।

—वे न लें, पर मम साब ?

—उनकी मेम साब ही नहीं हैं । साहब ने 'मरिज' नही की । जवानी लडाई मे काट दी ।

—कुछ और शौक तो होंगे ? दारू और बाकी सब कुछ ?

—वे बाल ब्रह्मचारी हैं । काल गल को मारकर भगा देंगे । कोई नशा नहीं करते । सयमी आदमी हैं ।

—तो क्या करें ?

—तुम्ही बताओ, क्या करें ?

किसी सयाने वकील ने सलाह दी—देखो, जो जितना बडा होता है वह उतना ही चापलूसी पसन्द होता है। हनुमान की कोई माया नही है। वे सिन्दूर शरीर पर लपेटते हैं और लाल लगोट पहनते है। वे सवहारा हैं और सर्वहारा के नेता। उन्हे खुश करना आसान है। व्यापारी खाता बही लाल कपडे मे बाधकर रखें।

रातो रात खाते बदले गए और खाता बहियो को लाल कपडे मे बाधा गया।

अयोध्या जगमगा उठी। राम सीता लक्ष्मण की आरती उतारी गई। व्यापारी वग ने भी खुलकर स्वागत किया। वे हनुमान को घेरे हुए उनकी जय भी बोलते रहे।

दूसरे दिन हनुमान कुछ दरोगाओ को लेकर अयोध्या के बाजार मे निकल पडे।

पहले व्यापारी के पास गए। बोले—खाता बही निकालो। जाच होगी।

व्यापारी ने लाल बस्ता निकालकर आगे रख दिया। हनुमान ने देखा—लगोट का और बस्ते का कपडा एक है। खुश हुए।

बोले—मेरे लगोट के कपड मे खाता बही बाधते हो?

व्यापारी ने कहा—हा, बल बुद्धि निधान, हम आपके भक्त है। आपकी पूजा करते हैं। आपके निशान को अपना निशान मानते हैं।

हनुमान गद्‌गद हो गए।

व्यापारी ने कहा—बस्ता खोलू? हिसाब की जाच कर लीजिए।

हनुमान ने कहा—रहने दो। मेरा भक्त बेईमान नही हो सकता।

हनुमान जहा भी जाते, लाल लगोट के कपडे मे बधे खाता बही देखते। वे बहुत खुश हुए। उन्होने किसी हिसाब की जाच नही की।

रामचन्द्र को रिपोट दी कि अयोध्या के व्यापारी बडे ईमानदार है। उनके हिसाब बिलकुल ठीक हैं।

हनुमान विश्व के प्रथम साम्यवादी थे। वे सवहारा के नेता थे। उन्हीका लाल रग आज के साम्यवादियो ने लिया है।

पर सवहारा के नेता को सावधान रहना चाहिए कि उसके लगोट से

बूज आ अपने खाता बही न बाध लें।

(२) प्रथम स्मगलर

लक्ष्मण मेघनाथ की शक्ति से घायल पड़े थे। हनुमान उनकी प्राण रक्षा के लिए हिमाचल प्रदेश से 'सजीवनी' नाम की दवा लेकर लौट रहे थे कि अयोध्या मे नाके पर पकड़ लिए गए। पकड़ने वाले नाकेदार को पीटकर हनुमान ने लिटा दिया। राजधानी मे हल्ला हो गया कि बड़ा बलशाली 'स्मगलर' आया हुआ है। पूरा फोर्स भी उसका मुकाबला नही कर पा रहा।

आखिर भरत और शत्रुघ्न आए। अपने आराध्य रामचन्द्र के भाइयो को देखकर हनुमान दब गए।

शत्रुघ्न ने कहा—इन स्मगलरो के मारे हमारी नाक मे दम है भैया। आप तो संन्यास लेकर बैठ गए हैं। मुझे भुगतना पड़ता है।

भरत ने हनुमान से पूछा—कहा से आ रहे हो?

हनुमान—हिमाचल प्रदेश से।

—क्या है तुम्हारे पास? सोने के बिस्किट गाजा अफीम?

—दवा है।

शत्रुघ्न ने कहा—अच्छा, दवाइयो की स्मगलिंग चल रही है। 'निकालो, कहा है?

हनुमान ने सजीवनी निकाल कर रख दी। कहा—मुझे आपके बड़े भाई रामचन्द्र ने इस दवा को लेने के लिए भेजा था।

शत्रुघ्न ने भरत की तरफ देखा। बोले—बड़े भैया यह क्या करने लगे हैं। स्मगलिंग मे लग गए है। पैसे की तंगी थी तो हमसे मगा लेते। स्मगल के धंधे मे क्यो फसते हैं। बड़ी बदनामी होती है।

भरत ने हनुमान से पूछा—यह दवा कहा ले जा रहे थे? कहा बेचोगे इसे?

हनुमान ने कहा—लका ले जा रहा था।

भरत ने कहा—अच्छा, उधर उत्तर भारत से स्मगल किया हुआ माल बिकता है। कौन खरीदते हैं? रावण के लोग?

हनुमान ने कहा—यह दवा तो मैं राम के लिए ही ले जा रहा था। बात यह है कि आपके भाई लक्ष्मण घायल पड़े हैं। वे मरणासन्न हैं। इस दवा के

बिना वे बच नही सकते।

भरत और शत्रुघ्न ने एक दूसरे की तरफ देखा। तब एक रजिस्टर मे स्मगलिंग का मामला दर्ज हो चुका था।

शत्रुघ्न ने कहा—भरत भैया, आप ज्ञानी हैं। इस मामले मे नीति क्या कहती है? शासन का क्या कर्तव्य है?

भरत ने कहा—स्मगलिंग यों अनैतिक है पर स्मगल किए हुए सामान से अपना या अपने भाई भतीजों का फायदा होता हो, तो यह काम नैतिक हो जाता है। जाओ हनुमान ले जाओ दवा!

मुंशी से कहा—रजिस्टर का यह पन्ना फाड दो।

आशीर्वादों से बनी जिंदगी है।

बचपन में एक बूढ़े अंधे भिखारी को हाथ पकड़कर सड़क पार कर दिया था। अंधे भिखारी ने आशीर्वाद दिया—बेटा, मेरे जैसा हो जाना। अंधे भिखारी का मतलब लम्बी उम्र से रहा होगा पर उन्होंने दूसरा मतलब निकाला और अध्यापक हो गए।

अध्यापक थे, तब एक टिटहरी की प्राण रक्षा की थी। टिटहरी ने आशीर्वाद दिया—भैया, मेरे जैसा होना। टिटहरी का चाहे जो मतलब रहा हो, पर वे 'इंटेलेक्चुअल' बुद्धिवादी हो गए। हवा में उड़ते हैं, पर जब जमीन पर सोते हैं तो टांगें ऊपर करके—इस विश्वास और दंभ के साथ कि आसमान गिरेगा तो पांवों पर थाम लूंगा।

आशीर्वादों से बनी जिंदगी का अब यह हाल है कि उनकी आमदनी ढाई हजार की है। बंगला है कार है। दोनों लड़के अच्छी नौकरी पा गए हैं। लड़की रिसर्च कर रही है। ऐसे में शरीफ से शरीफ आमदनी इंटलेक्चुअल हो ही जाएगा—वे कोई खास शरीफ भी नहीं हैं। वे होने में ऐसे ही लेट हो गए।

दो साल विदेश में रहकर वे लौटे तो परिचितों में हल्ला हो गया कि वे बुद्धिवादी हो गए हैं। तमाशा प्रेमी लोग उन्हें देखने जाते और बताते कि वे सचमुच बुद्धिवादी हो गए। एक ने उन्हें खिड़की से झांककर देखा और हमें बताया—वह तो सचमुच बुद्धिवादी हो गया। कमरे में बैठा छत को ऐसे देख रहा था जैसे यह हिसाब लगा रहा हो कि छत कितने सालों में गिर जाएगी। एक ने उन्हें बगीचे में घूमते देख लिया। कहने लगा—जब वह फूल की तरफ देखता, तो फूल कांपने लगता। वह भयंकर बुद्धिवादी हो गया है।

एक दिन हम उनसे मिलने पहुंचे—मैं और मेरा एक मित्र। फोन पर उन्होंने आधे घंटे बाद आने को कहा था। हम उन दिनों पूर्वी बंगाल के तूफान

पीडितो के लिए च दा इकट्ठा कर रहे थे। सोचा, बुद्धिवादी को देख भी लेंगे और कुछ च दा भी ले लेंगे।

उनके कमरे में हम घुसे। सचमुच वे बदले गए थे। काली फ्रेम का चश्मा निकल गया था। उसकी जगह पतली सुनहरी फ्रेम का चश्मा वे लगाए थे। आखा की चमक और फ्रेम की चमक एक दूसरी को प्रतिबिम्बित करके चका-चौंध पैदा कर रही थी। मुद्रा मे स्थायी खिन्नता। खिन्नता दुखदायी होती है। मगर उनके चेहरे पर सुखदायी खिनता थी। खिनता दुनिया की दुदशा पर थी। उसम सुख का भाव इस गव से मिला दिया था कि मैंने इस दुर्दशा को देख लिया। बाईं तरफ का नीचे का होठ कान की तरफ थोडा खिच गया था जिससे दोनो होठों के बीच थोडी जगह हो गई थी। स्थायी खिनता व लगातार चितन से ऐसा हो गया था। पूरे मुह मे वही एक छोटी सी सेंध थी जिसमे से उनकी वाणी निकलती थी। बाकी मुह ब द रहता था। हम पूरे मुह से बोलते हैं, मगर बुद्धिवादी मुह के बायें कोने को जरा-सा खोलकर गिनकर शब्द बाहर निकालता है। हम पूरा मुह खोलकर हसते हैं, बुद्धिवादी बाईं तरफ के होठो को थोडा खीचकर नाक की तरफ ले जाता है। होठ के पास के नथुने मे थोडी हलचल पैदा होती है और हमपर कृपा के साथ यह सकेत मिलता है कि—आई एम एम्यूज्ड! तुम हस रहे हो, मगर मैं सिर्फ थोडा मनोरजन अनुभव कर रहा हू। गवार हसता है बुद्धिवादी सिर्फ रजित हो जाता है।

टेबिल पर ५ ६ किताबें खुली हुई उलटी इस तरह पडी है जैसे पढते-पढते लापरवाही से डाल दी हो। पर वे लापरवाही से ऐसे छोडी गई है कि हर किताब का नाम साफ दिख रहा है। किताबो की समझदारी पर मैं न्यौछावर हो गया। लापरवाही से एक दूसरी पर गिरेंगी तो भी इस सावधानी से कि हर किताब का नाम न दबे। मैं समझ गया कि वे किताबें नहीं पढ रहे थे। हम आधा घटा बाद उन्होने बुलाया था। इस आधे घटे मे उन्होने बडी मेहनत से इन किताबो की बेतरतीबी साधी होगी। बुद्धिजीवी बार बार किताबों की तरफ हमारा ध्यान खीचने की कोशिश करता है। वह चाहता है, हम चकित हो और कहे—कितनी तरह की पुस्तकें पढते हैं आप! इनके तो हमने नाम भी नहीं सुने। हम चकित होने म देर कर रहे हैं। बुद्धिवादी थोडा बेचैन होता है।

उन्होंने हमें इस तरह बिठाया है कि हमारी तरफ देखने में उन्हें सिर को ३५ डिग्री घुमाना पड़े। ३५ डिग्री सिर घुमाकर, सोफे पर कुहनी टिकाकर, हथेली पर ठुड्डी को साधकर वे जब भर नजर हम देखते हैं तो हम उनके बौद्धिक आतंक में दब जाते हैं। हम अपने को बहुत छोटा महसूस करते हैं। उनकी मुद्रा और दृष्टि में जादू पैदा हो जाता है। जब इस कोण से हमें देखकर व पट में से निकलती सी धीमी गम्भीर आवाज में कहते हैं—टु माइ माइंड—तो हमें लगता है, यह आवाज ऊपर बादलों से आ रही है। पर आसमान तो साफ है। बड़ी कोशिश से हम यह जान पाते कि यह आवाज बुद्धिवादी के होठों के बायें बाजू की पतली संध में से निकली है। जब वे 'टु माई माइंड' कहते है, तब मुझे लगता है मेरे पास दिमाग नहीं है। दुनिया में सिर्फ एक दिमाग है और वह इनके पास है। जब वे ३५ डिग्री सिर को नहीं घुमाए होते और हथेली पर ठुड्डी नहीं होती, तब वे बहुत मामूली आदमी लगते हैं। कोण से बुद्धिवाद साधने की कला सीखने में कितना अभ्यास लगा होगा उनको।

बुद्धिवादी में लय है। सिर घुमाने में लय है, हथेली जमाने में लय है, उठने में लय है कदम उठाने में लय है, अलमारी खोलने में लय है, किताब निकालने में लय है, किताब के पन्ने पलटने में लय है। हर हलचल धीमी है। हल्का व्यक्तित्व हड़बड़ाता है। इनका व्यक्तित्व बुद्धि के बोझ से इतना भारी हो गया है कि विशेष हरकत नहीं कर सकता। उनका बुद्धिवाद मुझे एक थुलथुल मोटे आदमी की तरह लगा जो भारी कदम से धीरे धीरे चलता है।

वे बोले—मुझे यूरोप जाकर समझ में आया कि हम लोग बहुत पतित हैं।

मैंने कहा—अपने पतन को जानने के लिए आपको इतनी दूर जाना पड़ा?

बुद्धिवादी ने जवाब दिया—जो गिरनेवाला है वह नहीं देख सकता कि वह गिर रहा है। दूर से देखनेवाला ही उसके गिरने को देख सकता है।

उस वक्त हमें लगा कि हम एक गड्ढे में गिरे हुए हैं और यह गड्ढे के ऊपर से हमें बता रहा है कि हम गिर गए हैं। उसने हमारा गिरना देख लिया है इसलिए वह गिरनेवालों में नहीं है।

मेरे मित्र ने पूछा—हमारे पतन का कारण क्या है ?

बुद्धिजीवी ने आखें बद करके सोचा। फिर हमारी तरफ देखकर कहा—टु माइ माइड, हममे करेक्टर नही है।

अपन पतन की बात उन्होने इस ढग से कही कि लगा, उन्हें हमारे पतन से सतोष है। अगर हम पतित न होते तो उन्हें यह जानने और कहने का सुयोग कसे मिलता कि हम गिरे हुए हैं और हमारा गिरना व साफ देख रहे हैं।

साथी ने अब मुद्दे की बात कहना जरूरी समझा। बोला—पूर्वी बगाल मे तूफान से बडी तबाही हो गई है।

उसने मत्यु, बीमारी, भुखमरी की करुण गाथा सुना डाली।

बुद्धिवादी सुनता रहा। हम दोनो असर का इतजार कर रहे हैं। असर हुआ। बुद्धिवादी ने मुह के कोने से शब्द निकाले—हा, मैंने अखबार मे पढा है।

उस वक्त हमे लगा कि पूर्वी बगाल के लोग कृताथ हो गए कि उनकी दुदशा के बारे मे इन्होने पढ लिया। तूफान साथक हो गया। बीमारी और भुखमरी पर उन्होंने बडा अहसान कर डाला।

मैंने कहा—हम लोग उन पीडितो के लिए धन-सग्रह करने निकले हैं।

हम चदा लेने आए थे। वे समझे, हम ज्ञान लेने आए हैं।

उन्होंने हथेली पर ठुड्डी रखी और उसी मेघ गभीर आवाज मे बोले—टु माइ माइड—प्रकृति सतुलन करती चलती है। पूर्वी बगालस्तान की आबादी बहुत बढ गई थी। उसे सतुलित करने के लिए प्रकृति ने तूफान भेजा था।

इसी बीच पूर्वी बगाल मे उनकी सहायता के अभाव मे एक आदमी और मर गया होगा।

अगर कोई आदमी डूब रहा हो, तो वे उसे बचाएगे नही, बल्कि सापेक्षिक घनत्व के बारे म सोचेंगे।

कोई भूखा मर रहा हो, तो बुद्धिवादी उसे रोटी नहीं देगा। वह विभिन्न देशो के अन्न उत्पादन आकडे बताने लगेगा।

बीमार आदमी को देखकर वह दवा का इतजाम नही करेगा। वह विश्व

स्वास्थ्य सगठन की रिपोर्ट उसे पढकर सुनाएगा।

कोई उसे अभी आकर खबर दे कि तुम्हारे पिता जी की मृत्यु हो गई, तो बुद्धिवादी दुखी नही होगा। वह वश विज्ञान के बारे मे बताने लगेगा।

हमने चदे की उम्मीद छोड दी। अगर हमने बुद्धिवादी से चदा मागा, तो वह दुनिया की अर्थ व्यवस्था बताने लगेगा।

अब हमने अपने-आपको बुद्धिवादी को सौंप दिया।

वह सोच रहा था सोच रहा था। सोचकर बडी गहराई से वह खोजकर लाया वह सत्य, जिसे आज तक कोई नही पा सका था। बोला—टु माइ माइड, अवर ग्रेटेस्ट एनिमी इज पावर्टी। (मेरे विचार मे, हमारा सबसे बडा शत्रु गरीबी है।)

एक वाक्य सूत्र रूप में कहकर बुद्धिवादी ने हमे सोचने के लिए वक्त दे दिया। हमने सोचा, खूब सोचा। मगर गरीबी की समस्या के हल के लिए फिर बुद्धिवादी की तरफ लौटना पडा। मैंने पूछा—गरीबी दुनिया से कैसे मिट सकती है?

बुद्धिवादी ने कहा—मैंने सोचा है। पूजीवाद और साम्यवाद दोनो मनुष्य विरोधी है। ये दोनो गरीबी नही मिटा सकते। हमे आधुनिक तकनीकी साधनो का प्रयोग करके खूब उत्पादन बढाना चाहिए।

मैंने पूछा—मगर वितरण के लिए क्या व्यवस्था होगी?

बुद्धिवादी ने कहा—वही मैं आजकल सोच रहा हू। एक थ्योरी बनाने मे लगा हू।

मनुष्य जाति की तरफ आशा की एक किरण बढ़ाकर बुद्धिवादी चुप हो गया।

मेरे साथी ने कहा—हमे समाज का नव निर्माण करना पडेगा।

बुद्धिवादी ने फिर हम दोनो को घूरकर देखा। बोला—समाज का पहला फर्ज यह है कि वह अपने को नष्ट कर ले। सोसाइटी मस्ट डेस्ट्राय इटसल्फ! यह जाति, वर्ण और रग और ऊच-नीच के भेदो से जर्जर समाज पहले मिटे, तब नया बने।

सोचा, पूछू—सारा समाज नष्ट हो जाएगा तो प्रकृति को मनुष्य बनाने मे कितने लाख साल लग जाएगे? मैंने पूछा नहीं। यह सोचकर सतोष कर

लिया कि सिर्फ मैं समझता हूं, यह अहसास आदमी को नासमझ बना देता है।

बुद्धिवादी मार्क्सवाद की बात कर लेता है। फ्रायड और आइंस्टीन की बात कर लेता है। विवेकानन्द और कन्फ्यूसियस की बात कर लेता है। हर बात कहकर हमें उसे समझने और पचाने का मौका देता है। वह जानता है, ये बातें हम पहली बार सुन रहे हैं।

हम पूछते हैं—फिर दुनिया की बीमारी के बारे में आपने क्या सोचा है? किस तरह यह बीमारी मिटेगी?

वह आंख बंद कर लेता है। सोचता है। हम बड़ी बात सुनने के लिए तैयार हो जाते हैं। बुद्धिवादी कहता है अल्टीमेटली आई हैव टु रिटर्न टु गेन्डी। (आखिर मुझे गांधी की तरफ लौटना पड़ता है।) लव'—प्रेम।

बुद्धिवादी अब क्रांतिकारिता पर आ गया है। कहता है—स्टुडेण्ट पावर! यूथ पावर! हमें अपने समाज के युवा वर्ग को आज़ादी देनी चाहिए। वही पलटेंगे इस दुनिया को। वही बदलेंगे। जो कौम अपने युवा वर्ग को दबाती है, वह कभी ऊपर नहीं उठ सकती। यह किताब देखिए प्रोफेसर मात्यू ज की। यह कोहेन बेंडी की किताब!

बुद्धिवादी गम्भीर हो गया। उसने अन्तिम सत्य कह दिया।

हम उठने की तैयारी करने लगे। इसी वक्त नौकर ने एक लिफाफा लाकर उन्हें दिया।

बुद्धिवादी चिट्ठी पढ़ने लगा। पढ़ते पढ़ते उसमें परिवर्तन होने लगे। ३५ डिग्री का कोण धीरे धीरे कम होने लगा। बुद्धिवादी सीधा बैठ गया। होंठ की मरोड़ मिट गई। आंखों में बैठी बुद्धि गायब हो गयी। उसकी जगह परेशानी आ गई। चेहरा सपाट हो गया। सांस जोर से चलने लगी। बुद्धिवादी निहायत बौड़म लगने लगा।

बुद्धिवादी ने चिट्ठी को मुट्ठी में कस लिया। चश्मा उतार लिया। हम नंगी आंखें देख रहे थे। वे बुझ गई थीं। चमक चश्मे के साथ ही चली गई थी। दम्भ शायद मुट्ठी में चिट्ठी के साथ दब गया था।

मैंने कहा—आप परेशान हो गए। सब खैर तो है।

बुद्धिवादी हतप्रभ था। वह हमारे सामने अब उस असहाय बच्चे की तरह

हो गया जिसका खिलौना बाल्टी मे गिर गया हो।

गहरी सास लेकर बुद्धिवादी ने कहा—यह जमाना आ गया।

मैंने पूछा—क्या हो गया?

बुद्धिवादी ने कहा—लडकी अपनी मौसी के घर लखनऊ गई थी। वही उसने शादी कर ली। हमे पता तक नही।

मैंने पूछा—लडका क्या करता है?

बोले—इजीनियर है।

मैंने कहा—फिर तो अच्छा है।

बुद्धिवादी उखड पडा—क्या अच्छा है? मैं उसे जेल भिजवाकर रहूगा।

हमारे सामने एक महान क्षण उपस्थित था। मनुष्य जाति के आतरिक सम्बधो के बारे मे कोई महान सत्य निकलनेवाला है उनके मुख से। अब उनका मुह पूरा खुलने लगा है। चश्मा लगाए वे तब होठो की सम्पुट के कोने म गुरु गम्भीर आवाज निकालते थे। अब पूरा मूह खोलकर बोलत हैं।

बुद्धिवादी इस स्थिति का क्या विश्लेषण देता है। यूथ पावर? स्त्री पुरुष-सम्बन्धो की बुनियाद? विवाह की स्वतन्त्रता?

हम उनके मुह की तरफ देखते हैं। उनकी परेशानी बढती जाती है। चिट्ठी को वे लगातार भींच रहे हैं। वे शायद पत्नी को यह खबर बताने को आतुर हैं। पर हम यह जानने को आतुर हैं कि इतनी अच्छी शादी को लेकर ये परेशान क्यो हैं? जरूर इसमे कोई महान दार्शनिक तथ्य निहित है, जो सिर्फ बुद्धिवादी समझता है।

मैंने कहा—लडका लडकी बडे हैं। शादी मौसी के यहा हुई। वर अच्छा है। फिर आप दुखी और परेशान क्यो हैं? हम जिज्ञासुओ को वह रहस्य बताइए ताकि हम जीवन के प्रति बुद्धिवादी दृष्टिकोण अपना सकें।

उन्होने नगी बुझी आखो से हमारी तरफ देखा। फिर अत्यन्त भरी आवाज मे कहा—वह लडका कायस्थ है न।

उनका सब कुछ पवित्र है। जाति मे बाजे बजाकर शादी हुई थी। पत्नी ने ७ जन्मो मे किसी दूसरे पुरुष को नही देखा। उन्होने अपने लडके लडकी की शादी सदा मण्डप मे की। लडकी के लिए दहेज दिया और लडके के लिए लिया। एक लडका खुद पसद की और लडके की पत्नी बना दिया।

सब कुछ उनका पवित्र है। प्रापर्टी है। फुरसत मे रहते हैं। दूसरो की कलक चर्चा मे समय काटते हैं। जो समय फिर भी बच जाता है उसमे मूछ के सफेद बाल उखाडते हैं और बतन बेचनेवालो की राह देखते ह।

पवित्रता का मुह दूसरो की अपवित्रता के गदे पानी से धुलने पर ही उजला होता है। वे हमेशा दूसरो की अपवित्रता का पानी लोटे मे ही लिए रहते हैं। मिलते ही पवित्रता का मुह धोकर उसे उजला कर लेते है। वे पिछले दिनो २ लडकियो के भागने, ३ स्त्रियो के गभपात, ४ की गर बिरादरी मे मे शादी और २ पतिव्रताओ के प्रणय-प्रसग बता चुके है।

अभी उस दिन दात खोदते आए। भोजन के बाद कलक चर्चा का चूण फाकना जरूरी होता है। हाजमा अच्छा होता है। उन्होने चूण फाकना शुरू कर दिया—आपने सुना, अमुक साहब की लडकी अमुक लडके के साथ भाग गई और दोनो ने इलाहाबाद मे शादी कर ली। कैसा बुरा जमाना आ गया। मैं जानता हू कि वे बुरा जमाना आने से दुखी नही, सुखी हैं। जितना बुरा जमाना आएगा वे उतने ही सुखी होंगे—तब वे यह महसूस करके और कहकर गव अनुभव करेंगे कि इतने बुरे जमाने मे भी हम अच्छे के अच्छे है। कुछ लोग बडे चतुर होते हैं। वे सामूहिक पतन मे से निजी गौरव का मुद्दा निकाल लेते हैं और अपने पतन को समूह का पतन कहकर बरी हो जाते हैं।

मैंने अपनी दुष्ट आदत के मुताबिक कहा—इसमे परेशान होने की क्या बात है? अपने देश मे अच्छी शादिया लडकी भगाकर ही हुई हैं। कृष्ण ने रुक्मिणी का हरण किया था और अर्जुन ने कृष्ण की बहन सुभद्रा का। इसम कृष्ण की रजामदी थी। भाई अगर कोआपरेट करे तो लडकी भगाने मे

-आसानी होती है।

वे नही जानते थे कि मैं पुराण उनके मुह पर मारूगा। सभलकर बोले —भगवान कृष्ण की बात अलग है। मैंने कहा—हा, अलग तो है। भगवान अगर औरत भगाए तो वह बात भजन मे आ जाती है। साधारण आदमी ऐसा करे तो यह काम अनैतिक हो जाता है। जिस लडकी की आप चर्चा कर रहे हैं, वह अपनी मर्जी से घर से निकल गई और मर्जी से शादी कर ली, इसमे क्या हो गया ?

वे कहने लगे—आप मेरा उल्टी बातें करते है—रीति, नीति, परम्परा विश्वास क्या कुछ नही है ? आप जानते है, लडका लडकी अलग जाति के हैं ?

मैंने पूछा—मनुष्य जाति के तो हैं न ?

वे बोले—हा, मनुष्य होने म क्या शक है ?

मैंने कहा—तो कम से कम मनुष्य जाति मे तो शादी हुई। अपने यहा तो मनुष्य जाति मे बाहर भी महान पुरुषो ने शादी की है—जैसे भीम ने हिडिम्बा से।

ये घटनाए बढती जा रही हैं। क्या कारण है कि लडके-लडकी को घर से भागकर शादी करनी पडती है ? २४ २५ साल के लडके लडकी को भारत की सरकार बनाने का अधिकार तो मिल चुका है पर अपने जीवन साथी बनाने का अधिकार नही मिला।

घटनाए मैं रोज सुनता हू। दो तरह की चिटि्ठया पेटेण्ट हो गई हैं। उनके मजमून य ह। जि हें भागकर शादी करना है वे, और जि हें नही करना वे भी इनका उपयोग कर सकते हैं।

चिट्ठी न० १

पूज्य पिताजी,

मैंने यहा रमेश से वैदिक रीति के अनुसार शादी कर ली है। हम अच्छे हैं। आप चिन्ता मत करिए। आशा है आप और अम्मा मुझे माफ कर देंगे।

आपकी बेटी

सुनीता।

चिट्ठी नं० २

प्रिय रमेश,

मैं अपने माता पिता की इच्छा के विरुद्ध नहीं जा सकती। तुम मुझे माफ कर देना। तुम जरूर शादी कर लेना और सुखी रहना। तुम दुखी रहोगे तो मुझे जीवन में सुख नहीं मिलेगा। हृदय से तो मैं तुम्हारी हूं। (४ ५ साल बाद आओगे तो पप्पू से कहूंगी—बेटा, मामाजी को नमस्ते करो)

तुम्हारी
विनीता।

इसके बाद एक मजेदार क्रम चालू होता है। मां बाप कहते हैं—वह हमारे लिए मर चुकी है। अब हम उसका मुंह नहीं देखेंगे। फिर कुछ महीने बाद मैं उनके यहां जाता हूं तो वही लड़की चाय लेकर आती है।

मैं उनसे पूछता हूं—यह तो आपके लिए मर चुकी थी। वे जवाब देते हैं—आखिर लड़की ही है। और मैं सोचता रह जाता हूं कि जो आखिर में लड़की है वह शुरू में लड़की क्यों नहीं थी?

माता पिता की भावनाओं को मैं जानता हूं। विश्वास और परम्परा के टूटने में बड़ा दर्द होता है। जब शेरपा तेनसिंह गौरीशंकर की चोटी पर होकर आया था तब उससे किसी ने पूछा कि क्या वहां शंकर भगवान हैं? तो उसने कहा था कि नहीं हैं। एक सज्जन बड़े दर्द से मुझसे बोले—तेनसिंह को ऐसा नहीं कहना चाहिए था। मैंने कहा—वहां शंकर भगवान उसे नहीं दिखे तो उसने कह दिया कि नहीं हैं। वे बोले—फिर भी उसे ऐसा नहीं कहना चाहिए था। मैंने कहा—जब हैं ही नहीं तो

वे बोले—फिर भी उसे नहीं कहना था। मैंने उनसे पूछा—क्या आप मानते हैं कि वहां शंकरजी हैं? उन्होंने कहा—यह हम भी जानते हैं कि वहां शंकरजी नहीं हैं। पर एक विश्वास हृदय में लिए हैं कि शंकरजी हैं, वे औढर-दानी हैं। कभी कोई संकट हमपर आएगा तो वे आकर हमें उबार लेंगे।

झूठे विश्वास का भी बड़ा बल होता है। उसके टूटने का भी सुख नहीं, दुख होता है।

एक सज्जन की लडकी दूसरी जाति के लडके से शादी करना चाहती थी। यहा मा-बाप का जाति प्रथा की शाश्वतता मे विश्वास आडे आ गया। लडका अच्छी-ऊची नौकरी पर था, परन्तु लडकी के माता पिता ने उसकी शादी अपनी ही जाति के एक लडके से कर दी जो कम तो कमाता ही था, अपनी पत्नी को पीटता भी था। एक दिन मैंने उन सज्जन से कहा कि सुना है लडकी बडी तकलीफ मे है। वह उसे पीटता है। उन्होने कोई जवाब नही दिया। जवाब देते भी तो क्या देते, सिवा इसके कि—इतना तो सतोष है कि जाति वाले से पिट रही है।

आखिर ये हमारे लोग किस परम्परा को, किस आदर्श को मान रहे हैं? राम मर्यादापुरुषोत्तम हैं। सीता महासती हैं। इनसे श्रेष्ठ स्त्री पुरुष की कल्पना और ऐसे अच्छे विवाह की कल्पना इस समाज मे नहीं है। मर्यादा पुरुषोत्तम का निर्माण करने वाले तुलसीदास कहते हैं कि पुष्पवाटिका म 'ककण किंकिणि नूपुर' की ध्वनि सुनकर लक्ष्मण के सामने राम 'कमेंट' करते हैं कि ऐसा लगता है जैसे मदन ने दुदुभि दे दी है। यानी राम के मन का धनुष वहीं टूट गया। विवाह पूर्व प्रेम भी हो गया और फिर विवाह भी हो गया। आज जिन मूल्यों को इस मामले मे माना जा रहा है उनको देखकर मुझे लगता है कि तुलसीदास ने जो लिखा है वैसा न हुआ होगा। हुआ ऐसा होगा—राम ने लक्ष्मण से पूछा होगा कि यह ककण, किंकिणि और नूपुर की ध्वनि किसकी है? लक्ष्मण ने कहा होगा—यह जनक की लडकी सीता की है। तब राम ने पूछा होगा कि क्या जनक अपनी ही बिरादरी के हैं? लक्ष्मण ने कहा होगा—हा, राजा जे० के० सिंह अपनी ही बिरादरी के हैं। राम ने कहा होगा—तभी तो मेरा मन डोल उठा। दूसरी बिरादरी के होते तो मेरे मन पर कोई असर नहीं होता।

इन लडके-लडकियो से क्या कहा जाए! यही, न कि प्रेम की जाति होती है। एक हिन्दू प्रेम है, एक मुसलमान प्रेम, एक ब्राह्मण प्रेम, एक ठाकुर प्रेम, एक अग्रवाल प्रेम। एक कोई जावद आलम किसी जयन्ती गुहा से शादी कर लेता है, तो सारे देश म लोग हगामा कर देते हैं और दगा भी करवा सकते हैं।

इस सबको देखते हुए आगे चलकर तरुण-तरुणी के प्रेम का दृश्य ऐसा

होगा। तरुण तरुणी मिलते हैं और यह वार्तालाप होता है—

तरुण—क्या आप ब्राह्मण हैं, और ब्राह्मण हैं तो किस प्रकार की ब्राह्मण हैं?

तरुणी—क्यो, क्या बात है?

तरुण—कुछ नहीं। ज़रा आपसे प्रेम करने का इरादा है।

तरुणी—मैं तो क्षत्री हू।

तरुण—तो फिर मेरा आपसे प्रेम नहीं हो सकता, क्योकि मैं ब्राह्मण हू।

लोग कहते हैं कि आखिर स्थायी मूल्य और शाश्वत परम्परा भी तो कोई चीज है। सही है, पर मूर्खता के सिवाय कोई भी मान्यता शाश्वत नही है। मूर्खता अमर है। वह बार-बार मरकर फिर जीवित हो जाती है।

इधर मैं लड़के-लड़की से पूछता हू कि वेद तो यहा भी हैं और यहा भी वैदिक रीति है फिर तुम लोगो ने यहीं क्यो नहीं शादी कर ली? भागकर दूसरी जगह क्यो गए?

वे कहते हैं—यहा माता पिता बाधा डालते।

मैं समझ गया। क्रांति ये तरुण ज़रूर करेंगे पर यथास्थिति की नज़र बचाकर।

वे सज्जन जो मुझे खबर दे गए थे, कह रहे थे कि आखिर हम बुज़ुर्गों के जीवन भर के अनुभव का भी तो कोई महत्त्व है। मैंने कहा—अनुभव का महत्त्व है। पर अनुभव से ज्यादा इसका महत्त्व है कि किसीने अनुभव से क्या सीखा। अगर किसीने ५० ६० साल के अनुभव से सिर्फ यह सीखा हो कि सबसे दबना चाहिए तो अनुभव के इस निष्कर्ष की कीमत मे शक हो सकता है। किसी दूसरे ने इतने ही सालो के अनुभव से शायद यह सीखा हो कि किसी से नहीं डरना चाहिए।

आप तो ५०-६० साल की बात करते हैं। केंचुए ने अपने लाखो सालो के अनुभव से कुल यह सीखा है कि रीढ़ की हड्डी नही होनी चाहिए।

चुनाव हो गए। नतीजे आ रहे हैं। 'कार्यकर्त्ता' अब कहीं नहीं दिखता। चुनाव के दिनों में यह एक नई नस्ल पैदा होती है—कार्यकर्त्ता। सच्चा कार्यकर्त्ता वह है जो पार्टी को 'पालटी' बोलता है, विरोधी को 'चुनटी' देता है और जिसकी सारी कोशिश यह होती है कि उम्मीदवार से ज्यादा से ज्यादा पैसे चाय-नाश्ते के लिए झटक ले। वर्षा और शीत की संधि वेला में पतंगे बल्ब के आस पास मंडराते हैं। वे मुझे कार्यकर्त्ता लगते हैं और बल्ब उम्मीदवार। फिर पतंगे लोप हो जाते हैं, बल्ब बराबर जलता रहता है। कार्यकर्त्ता अब सिर्फ तब दिखेगा, जब किसीकी जमानत दिलानी होगी, पुलिस केस दबाना होगा या तबादला कराना होगा।

बडा शोर था इस चुनाव का।

घोषणाएं की जाती थी कि यह चुनाव धर्मयुद्ध है, कौरव पांडव-संग्राम है। धृतराष्ट्र चौंककर संजय से कहते हैं—ये लोग अभी भी हमारी लड़ाई लड रहे हैं। ये अपनी लडाई कब लडेंगे ? संजय कहते हैं—इन्ह दूसरों की लडाई में उलझे रहना ही सिखाया गया है। ये दूसरे की लडाई लडते-लडते ही मर जाते हैं।

धर्मयुद्ध है तो बडे भाई युधिष्ठिर को जरूर जुआ खेलने की लत पड गई होगी। कौन कौरव और कौन पांडव—यह मेरी समझ में नहीं आ रहा था। देख रहा था कि जो अपने को पांडव कहते हैं, वही द्रौपदी को चौराहे पर नंगा कर रहे थे। और अब देख रहा हूं कि कुछ पांडव कौरवों से भीतर ही भीतर मिले हैं और कुछ कौरव पांडवों से।

किस हेतु है यह धर्मयुद्ध ? सुई की नोक के बराबर जमीन के लिए ? या इसलिए कि द्रौपदी बाल बिखराकर बिफरती हुई पतियों को धिक्कार रही थी ?

राजनीति का ज्ञानी कहता है—इस चुनाव के 'इश्यूज' समझो। यह चुनाव संविधान और न्यायपालिका का भाग्य निर्णय करेगा। संविधान पवित्र

है। वह बदला नही जा सकता। न्यायपालिका सर्वोच्च है। वह संविधान की रक्षा करती है।

वह संविधान की पोथी पर हल्दी अक्षत चढ़ाकर उसकी पूजा करता है। मैंने पूछा—इसकी पूजा क्यों करते हो? वह जवाब देता है—क्योंकि यह २०-२२ साल पहले लिखा गया था।

मैं पूछता हू—इसे किसने लिखा? क्यो लिखा? किन परिस्थितियो मे लिखा? लिखने वाला के विचार-मान्यताए क्या थे? उनकी क्या कल्पना थी? किन जरूरतो से वे प्रेरित थे? देशवासियो के भविष्य के बारे मे उनकी क्या योजना थी?—क्या ये सवाल इस पोथी के बारे म पूछना जायज नहीं है?

वह कहता है—कतई नहीं। जो पहले लिखा गया है उसके बारे मे कोई सवाल नही उठाना चाहिए। वह तक से परे है। पहले लिखे की पूजा और रक्षा होनी चाहिए। वह पवित्र है। भोजपत्र पर जो लिखा है वह आर्ट पेपर पर छपे से ज्यादा पवित्र होता है।

दूसरा ज्ञानी कहता है—देखो जी, संविधान एक औजार है, जिससे कुछ बनाना है। संविधान को आदमी बनाना है, आदमी को संविधान नही बनाता है। इस औजार से मनुष्य का भाग्य बनाना है।

मैं पूछता हू—पर बनाने मे औजार घिस जाए या टूट जाए तो?

जवाब देता है—तो मरम्मत कर लेंगे या दूसरा औजार ले आएगे।

मैं देखता हू, एक ज्ञानी इस औजार को रोज निकालता है, उसे साफ करता है, उसपर पालिश करता है और डब्बे म रखकर उसे ताले मे बद कर देता है।

वह औजार से बनाता कुछ नही।

पूछता हू—इस औजार से कुछ बनाओगे नही?

वह कहता है—नही, बनाने से औजार बिगड़ जाएगा। हमारा कर्त्तव्य है, औजार की रक्षा करना। यह जो मजबूत तिजोरी है, वह न्यायपालिका है। इसमे हमने पालिश करके संविधान को रख दिया है। अब वह सुरक्षित है।

मैं पूछता हू—और तुम या हम जैसे लोगों का क्या होगा? हमारा अस्तित्व है? हम क्या सिर्फ पहरेदार हैं?

उस ज्ञानी के जवाब से ऐसा लगता है, जैसे न्यायपालिका को सं

का गर्भ रह गया था, जिससे हम करोड़ों आदमी पैदा हो गए। हम संविधान और न्यायपालिका के व्यभिचार की अवैध संतानें हैं। तभी तो हमें कोई नहीं पूछता।

न्याय देवता का मैं आदर करता हूँ। पर एक न्याय देवता सेशन कोर्ट में बैठता है, दूसरा हाईकोर्ट में और तीसरा सुप्रीम कोर्ट में। सेशन वाला न्याय देवता मुझे मौत की सजा दे देता है। मैं जानता हूँ मैं बेकसूर हूँ। उधर हाईकोर्ट में बैठा न्याय देवता बड़ी बेताबी से मेरा इंतजार कर रहा है कि यह मेरे सामने आए तो मैं इस निर्दोष को बरी कर दूँ। पर मैं उसके सामने *जा नहीं सकता क्योंकि मेरे पास ५-६ हजार रुपये नहीं हैं। न्याय देवता मेरी* तरफ करुणा से देखता है और मैं उसकी तरफ याचना से—पर हम आमने-सामने नहीं हो सकते। अगर मैं ५-६ हजार खर्च कर सकूँ तो फाँसी से बच सकता हूँ।

कौन सा न्याय देवता सच्चा है—सेशन वाला जो फाँसी देता है या हाईकोर्ट वाला जो बरी करता है? छोटे आदमी के लिए छोटे देवता और बड़े आदमी को बड़े देवता तक पहुँच! छोटे आदमी का भाग्य निर्माता गाँव के बाहर के पेड़ वृक्ष के नीचे रखा लाल पत्थर और बड़े आदमी के लिए रामेश्वर का देवता।

दिन भर इन चीजों में दिमाग उलझा रहा। संविधान, न्यायपालिका, संसद, मूलभूत अधिकार! शब्द! संविधान का शब्द! उस शब्द का अर्थ, अर्थ भेद! लिखा शब्द ब्रह्म।

शाम को रिक्शे में बैठा लौट रहा था। रिक्शावाला बात करने लगा। मैं रिक्शे में अक्सर बैठता हूँ और जल्दी न हो तो रिक्शावाले से बात करता चलता हूँ।

मैं उससे पूछता हूँ—तुमने वोट दिया था?

उसने कहा—नहीं साहब, फालतू हाथ पर काला धब्बा लगवाने से क्या फायदा सपना?

मतदान का 'पवित्र' अधिकार जिसे कहते हैं उसे यह रिक्शावाला हाथ पर काला धब्बा लगाना कहता है।

वह कहता है—२-३ घंटे लगते हैं वोट डालने में। इतने में २-३ रुपये

कमा लेते हैं, जिससे बच्चो का पेट रात को भरता है। वोट दे दें तो बच्चे भूखे रहे। बाप के वोट देने के शौक के लिए बच्चे भूखे क्यो रहें? बताइए साहब!

मैंने कहा—तुम क्या वोट की कीमत नही जानते?

उसने कहा—जानता हू। एक वोट से हार या जीत हो सकती है। मरे एक वोट से कोई जीत सकता है। पर उससे मेरा क्या फायदा? हम लोगो का कोई भी तो भला नही करता। सब मज़ा-मौज करने लगते हैं। जब-जब हमने वोट दिया है, उसके बाद हमारी मुसीबत और बढ गई है। यह वोट ही पाप की जड है। तो हमने वोट देना ही बंद कर दिया।

संसदीय लोकतंत्र पर आस्था रखनेवाले को परेशानी होगी कि बहुत लोग वोट को पाप की जड मानने लगे हैं।

ज्ञानियों की बहुत बातें मैं सुन चुका था। अब इस अज्ञानी की बातें सुन रहा हू।

वह कहता है—साहब, इन सबमें होड लगी है कि कौन हमें भूखा मार ले। हमारा क्या है? किस्मत मे जितना है, उतना मिल जाता है।

वह क्रोध से किस्मत पर आ जाता है। इस देश के ज्ञानी या अज्ञानी सबकी यह विडंबना है कि वह क्रोध से फौरन किस्मत पर आ जाता है।

रात को बहुत देर तक नींद नही आती। ज्ञानियों की और अज्ञानी रिक्शे वाले की बातें मन मे गूजती हैं।

नींद आती है, तो मैं एक सपना देखता हू—

मैं उडकर एक अजनबी प्रदेश मे पहुच गया हू।

वहा लोग जुलूस निकाल रहे हैं, प्रदर्शन कर रहे हैं। वे माग कर रहे हैं—सरकार हमें भूखा रहने दे। हमें भूखा मरने का अधिकार है। यह सरकार हमारे इस अधिकार को छीन रही है। हम ऐसी सरकार नही चाहिए।

सरकार की तरफ से जवाब दिया जाता है—सरकार अपनी तरफ से पूरी कोशिश करती है कि जनता भूखी रहे। पर कुछ पैदावार हो जाती है, तो हम क्या करें? उसे किसीको तो खाना ही पडेगा। आप लोगो को थोडा-थोडा अन्न देना सरकार की मजबूरी है।

जनता कहती है—नही, हमें यह सरकार नही चाहिए। हम सरकार बद

लेंगे। हमे वह सरकार चाहिए, जो हमे भूखा रखे। सरकार की बहानेबाजी नही चलेगी। फिर से चुनाव हो।

मैं सपना देख रहा हू। निर्वाचन का निश्चय हो जाता है।

जिस मुद्दे पर चुनाव हो रहा है, वह है—'जनता को कसे भूखा मारना है।'

राजनतिक पार्टिया प्रचार-काय मे लगी हैं।

पार्टी नम्बर १ कहती है—हम जनता को वचन देते हैं कि हम सत्ता में आते ही खेती बद करा देंगे। अन्न ही पदा नही होगा तो जनता भूखी रहेगी ही।

जनता कहती है—नहीं, अन्न तो खूब पैदा होना ही चाहिए। फिर भी हमे भूखा रहने देना चाहिए। अन्न पैदा नही होगा, तो हमारा राष्ट्रीय गौरव नष्ट हो जाएगा।

पार्टी न० २ वादा करती है—हम अन्न तो पैदा होने देंगे, पर उसे महगा इतना कर देंगे कि लोग खा नहीं सकेंगे।

जनता कहती है—यह खेल हम बहुत देख चुके। इससे हमे सतोष नही। हम नये ढग से भूखा मरना चाहते हैं।

तब पार्टी न० ३ मच पर आती है। वह कहती है—हम अन्न की पैदावार खूब बढाएगे, पर साथ ही चूहो का भी सघन उत्पादन होगा। जनता को अन्न उत्पादन का गौरव भी मिलेगा, और चूहो के अन्न खा जाने के कारण भूखा मरने का सुख भी।

जनता कहती है—यह पार्टी हमे पसद है। इसीकी सरकार बनेगी। हम बाहुल्य म भूखा मरना चाहत हैं।

सरकार बन जाती है। सघन खेती का कायक्रम लागू होता है। साथ ही चूहो का सघन उत्पादन भी चलता है। अच्छी अच्छी नस्ल के चूहे—आदमी से बड कद वाले, आदमी से दुगने पेट वाले।

अन्न पैदा होता है और चूह उसे खा जात हैं।

जनता खुश होती है और सरकार की जय बोलती है।

साल पर साल निकल जात हैं। फसल चूह खा जाते हैं। आदमी की पीढ़िया खुशी-खुशी भूखी मर रही हैं।

एक साल अकाल पड जाता है।

चूहो के खाने के लिए अन्न नही है।

चूहे सरकार को घेरते हैं—हमने अपने को आदमी स बडा बनाने के लिए लगातार 'ओवरईटिंग' किया है। हमारी खाने की आदत पड गई है। हमे खान को दो।

सरकार कहती है—जरा धीरज रखो। अगली फसल तक रुक जाओ।

चूह कहते हैं—धीरज हम नहीं है। हम भूखे हैं। तुम्हींने हमे खाने की लत लगाई है। अब हमारा पेट भरो।

सरकार कहती है—पर हम तुम्हारा पेट किस चीज से भरें ?

चूहे बेताब है। वे भूख से तिलमिला रहे हैं। वे कहते हैं—तुम नही जानते पर हम जानते हैं कि हमे अब क्या खाना चाहिए।

और मैं देखता हू चूहे दात किटकिटाकर भिड जाते हैं।

पहले चूहे सविधान को कुतर कर खा जाते हैं।

फिर चूहे सरकार को खा जाते हैं, ससद् को खा जाते हैं, न्यायपालिका को खा जाते हैं।

मेरी नीद खुल जाती है।

सवैंधानिक बहस करने वाले ज्ञानी मुझे याद आते हैं। फिर याद आता है, वह रिक्शावाला।

क्या अर्थ है, इस सपने का ? पता नही।

पर त्रिजटा सीता से कहती है—

यह सपना मैं कहौं विचारी
हुइ है सत्य गए दिन चारी।

जिसकी छोड भागी

यह जो आदमी मेरे सामने बैठा है, जवान है और दुखी है। जवान आदमी को दुखी देखने से पाप लगता है। मगर मजबूरी म पाप भी हो जाता है। बेकारी से दुखी जवानो को सारा देश देख रहा है और सबको पाप लग रहा है। सबसे ज्यादा पाप उन भाग्यविधाताओ को लग रहा है, जिनके कम, अक्रम और कुकम के कारण वह बकार है। इतना पाप और फिर भी ये ऐसे भले चगे! क्या पाप की भी क्वालिटी गिर गई है? उसमे भी मिलावट होने लगी है?

नही, आप गलत समझे। यह जवान बेकारी के कारण दुखी नही है। नौकरी उसकी है। नौकरी बीबी की माग करती है—तो शादी उसने कर ली थी। हाल मे उसकी बीबी उसे छोडकर एक पैसेवाले के घर में बैठ गई है। वह दुखी है। मैं उसके दुख को महसूस करने की कोशिश करता हू। पर कसे कर सकता हू? जिसकी न कभी हुई, न भागी, वह उसके दुख को महसूस नही कर सकता। वह गलत आदमी के पास सलाह लेने आ गया है। उसे ऐसे आदमी के पास जाना चाहिए था जिसकी भाग चुकी है और उससे पूछना था कि भैया, ऐसे मौके पर क्या किया जाता है। बहरहाल, मैं सुन रहा हू और समझने की कोशिश कर रहा हू। इसकी तनख्वाह कम है। इतने मे पत्नी के पद पर बने रहना उस औरत को शोभा नही दिया। उसे ज्यादा रुपया की बीबी बनना था। यह आदमी आमदनी नही बढा सका। घूस लेना इससे बनता नही है। घूस से पारिवारिक जीवन सुखी होता है। मेरे एक पुराने पडौसी बिक्रीकर विभाग म थे। और भरपेट घूस खाते थे। उनकी बीबी उ हे इतना प्यार करती थी कि वे मर जाते तो वह उनकी चिता पर सती हो जाती। उसे यह कतई बरदाश्त न होता कि पति तो स्वग मे घूस खाए और वह यहा उसके लाभ से वचित रह जाए। कितने सुखी लोग थे। शाम को सारा परिवार भगवान की आरती गाता था—जय जगदीश हरे! भगवान के सहयोग के बिना शुभ काय नही होते। आरती मे आगे आता—सुख

सम्पति घर आवे! शाम को यह बात कही जाती और सुबह बनियो के लाल वस्त्रों मे बधी सुख सम्पत्ति चली आती। जिस दिन घूसखोरो की आस्था भगवान पर से उठ जायगी, उस दिन भगवान को पूछनेवाला कोई नही रहेगा। आरती म आता—तुम अतर्यामी। भगवान तुम जानते हो, मेरे अतर मे घूस लेने की इच्छा है और तुम दिलाते भी हो। आरती की एक पक्ति से मुझे भी आशा बधती—श्रद्धा-भक्ति बढाओ सतन की सेवा! मुझे लगता, जिस दिन इसे सत की सेवा करनी होगी वह सत ढूढ़ने दूर कहा जाएगा। मैं तो पडोस मे ही रहता हू, पर उसने कभी मुझे सत के रूप मे मान्यता नही दी।

यह आदमी भी अगर मेरे पडोसी जैसा भगवद्भक्त होता, तो इसकी बीवी न्ही भागती। उसकी तो बीवी छोड गई है, मगर मेरे मन मे दूसरी ही बातें उठने लगी हैं। मैं कहना चाहता हू—पगले, जमाने को समझ। यह जमाना ही किसी समथ के घर मे बठ जाने का है। वह तो औरत है। तू राजनीति के मर्दों को देख। वे उसीके घर मे बैठ जाते हैं, जो मन्त्रिमण्डल बनाने मे समथ हो। शादी इस पार्टी से हुई थी मगर मन्त्रिमण्डल दूसरी पार्टी वाला बनाने लगा, ता उसीकी बहू बन गए। राजनीति के मर्दों ने वेश्याओ को मात कर दिया। किसी किसीने तो घटे भर मे तीन-तीन खसम बदल डाले। आदमी ही क्यो, समूचे राष्ट्र किसी समथ के घर मे बैठ जाते हैं। इसी देश मे कुछ लोग कहते हैं, कि स्वतत्र विदेश नीति बदल डालो—याने औरत बनाकर देश को किसी बड्डे के घर मे बिठा दो।

इन बातो से न उसे शाति मिलेगी न रास्ता मिलेगा। जिसकी बीवी छोड भागी है, उसका मन राजनीति मे नही रम सकता।

वह कहता है—वह बूढा है, उसके बाप की उम्र का।

वह जवान के घर बैठती, तो उसे शायद कम दुख होता। इस जवान को बूढे से हार जाने का विशेष दु ख है या अभी भी उस स्त्री के सुख का इसे ध्यान है।

इस अभागे को नही मालूम कि पैसे से बडी मर्दानगी होती है। आदमी मद नही होता है, पैसा मद होता है। अमरीका के अच्छे अच्छे जवान टापते रह गए और जेकलिन को ले गया बूढ़ा अरबपती ओनासिस।

एक ६० साल के बूढे की तीन बीविया मर चुकी थी। बूढा जायदाद

वाला। सतान कोई नहीं। उसे चौथी बीवी की जरूरत महसूस हुई। उमे बीवी तो चाहिए ही थी, जायदाद का वारिस भी चाहिए था। वारिस न हो तो जायदाद हाय-हाय करती रहती है कि मेरा क्या होगा। आदमी को आदमी नही चाहिए। जायदाद को आदमी चाहिए। बूढ़े की नजर गाव की एक कन्या पर थी। पर उसके मा-बाप राजी कैसे हो। बूढा चतुर था। उसने लडकी के रिश्तदारो से कहा—चलो भैया, तीरथ कर आए। तीथ मे उसने कुछ रुपये देकर साधु को मिला लिया। फिर लडकी के रिश्तदारो के हाथ उसके पास गया और हाथ दिखाया। साधु पहले से सधा हुआ था। उसने हाथ देखकर कहा—तुम्हारी एक और शादी होगी। लिखी है। बूढे ने बनकर कहा—अरे नहीं महात्मा, इस उम्र में मायाजाल मे मत फसाओ। साधु ने कहा—तुम चाहो या नही, वह तो होगी। लिखी है। लिखी को कोई नहीं मिटा सकता। लडका भी होगा। रिश्तेदारो ने गाव पहुचकर लडकी के मा-बाप से कहा—उसके तो लिखी है। लडका भी लिखा है। बहुत जायदाद है। लडकी दे दो। लिखी थी, तो बूढे की शादी हो गई। सदियो से यह समाज लिखी पर चल रहा है। लिखाकर लाए हैं तो पीढिया मला ढो रही हैं और लिखाकर लाए हैं तो पीढ़िया ऐशोआराम भोग रही हैं। लिखी को मिटाने की कभी कोशिश ही नही हुई। दुनिया के कई समाजो ने लिखी को मिटा दिया। लिखी मिटती है। आसानी से नही मिटती तो लात मारकर मिटा दी जाती है। इधर कुछ लिखी मिट रही है। भूतपूव राजा रानी की लिखी मिट गई। अछूतों के लडके पढ लिखकर अफसर भी होने लगे हैं और जिन विप्र परिवारो मे उनका बाप सफाई करता है उनके लडके उसे झुककर सलाम करते हैं। जो लिखाकर लाए थे कि उनके हमेशा चरण छुए जाएगे, उनकी भी लिखी मिट रही है।

यह जवान आदमी अगर यही मान ले कि वह औरत इसके नही लिखी थी उस पैसे वाले को लिखी थी, तो यह शात हो सकता है।

ऐसी घटनाए होना जरूरी है। इनसे फिल्मो मे बेवफाई के गाने बनते हैं। पर फिल्म मे जो बेवफाई करती है वह पत्नी नही, प्रेमिका होती है और बावफा प्रेमी का काम आसान हो जाता है। वह 'हाय बेवफा' कहकर रोता है और हृदय परिवतन की राह देखता है।

प्रेमिका की बात अलग है, पत्नी की अलग। पश्चिम ने कम से कम इतना कर लिया है कि पति-पत्नी की न पटे तो तलाक ले लिया मगर इस देश मे चोरी छुपे का मामला है। यहा तलाक नही होता औरत की नाक काट ली जाती है या उसकी हत्या कर दी जाती है। गाववाला कुल्हाडी से मारता है, शहरवाला जहर देता है।

यह आदमी क्या इरादा रखता है ? मैं कहता हू—तुम उस बूढे की औरत को भगा लाओ।

वह कहता है—उसकी तो मर गई। और होती भी तो उस बुढिया को लाता।

मैं कहता हू—तो तुम दूसरी से शादी कर लो।

उसने कहा—मेरा तो जी होता है कि जाकर उस हरामजादी के कलेजे मे छुरा घुसेड दू।

आखिर यह भी सच्चा भारतीय मर्द निकला। तलाक नही देगा, छुरा घुसेडेगा। यह समझता है कोई उसके घडे को उठाकर ले गया है। यह उसे पत्थर से फोडना चाहता है—मैं इसमे पानी नही पीऊगा, तो तू भी नहीं पिएगा।

मैं कहता हू—औरत प्रापर्टी नही है।

वह भर-आख मुझे देखता है। कहता है—औरत प्रापर्टी नही है ?

मैं कहता हू—नही।

वह नीचा सिर करके अपने आप बार बार कहता है—अच्छा, औरत प्रापर्टी नही है। हू, औरत प्रापर्टी नही है !

८ १० बार ऐसा कहकर वह उठकर चला जाता है।

सोचता हू—क्या यह उसे छुरे से मार डालेगा ? नही, वह कहता है—ऐसा जी होता है कि छुरा घुसेड दू। जिसका जी होता है वह छुरा नही घुसेडता। मारनेवाला पहले छुरा घुसेडता है, बाद मे जी से पूछता है।

मैं उसे भूल जाता हू। किसे फुरसत है कि पति को छोडकर भागी औरतो का हिसाब रखे।

एक दिन वह मुझे बस स्टेशन पर मिल जाता है। उसके पीछे एक औरत है। वह मुझसे 'नमस्ते' करता है। उसी क्षण औरत थोडा सा घूघट कर

लेती है।

वह कहता है—यह मेरी बीवी है।

मैं पूछता हू—तुमने दूसरी शादी कर ली, यह अच्छा किया।

उसने कहा—नही, वही है।

अरे, औरत को राजनीति की बीमारी लग गई। दो महीने मे दो बार दल बदल कर डाला।

वह मेरी तरफ अजब ढग से देखता है। लगता है, कह रहा है—तुम तो कहते थे औरत प्राप र्टी नहीं है। अब देखो।

मैं औरत को देखता हू। वह सचमुच प्रापर्टी की तरह ही खडी थी।

किताबो की दूकान और दवाओ की

बाजार बढ रहा है। इस सडक पर किताबो की एक नई दूकान खुली है और दवाओ की दो। ज्ञान और बीमारी का यही अनुपात है अपने शहर मे। ज्ञान की चाह जितनी बढी है उससे दुगनी दवा की चाह बढी है। यो ज्ञान खुद एक बीमारी है। 'सबसो भले विमूढ, जिन्हि न व्यापै जगत गति।' अगर यह एक किताब की दूकान न खुलती तो दो दूकानें दवाइयो की न खोलनी पडती। एक किताब की दूकान ज्ञान से जो बीमारिया फैलाएगी, उनकी काट ये दो दवाओ की दूकानें करेंगी।

पुस्तक विक्रेता अक्सर मक्खी मारते बठा रहता है। बेकार आदमी हैजा रोकते हैं क्योकि वे शहर की मक्खिया मार डालते हैं। ठीक सामने दवा की दूकान पर हमेशा ग्राहक रहते हैं। मैं इस पुस्तक विक्रेता से कहता हू—तूने धधा गलत चुना। इस देश को समझ। यह बीमारी प्रेमी देश है। तू अगर खुजली का मलहम ही बेचता तो ज्यादा कमा लेता। इस देश को खुजली बहुत होती है। जब खुजली का दौर आता है तो दगा कर बठता या हरिजनो को जला देता है। तब कुछ सयानो को खुजली उठती है और वे प्रस्ताव का मलहम लगा कर सो जाते हैं। खुजली सबको उठती है—कोई खुजाकर खुजास मिटाता है, कोई शब्दो का मलहम लगाकर।

मुझे इस सडक के भाग्य पर तरस आता है। सालो से देख रहा हू, सामने के हिस्से मे जहा परिवार रहते थे वहा दूकानें खुलती जा रही है। परिवार इमारत मे पीछे चले गए हैं। दूकान लगातार आदमी को पीछे ढकेलती जा रही है। दूकान आदमी को ढापती जा रही है। यह पहले प्रसिद्ध जनसेवी स्वतत्रता सग्राम सेनानी दुर्गा बाबू की बैठक थी। वहा अब चूडियो की दूकान खुल गई है। दुर्गा बाबू आम सडक से गायब हो गए। यो मैंने बहुत-से क्राति वीरो को बाद मे भ्रातिवीर होते देखा है। अच्छे अच्छे स्वातन्त्र्य शूरो को दूकानो के पीछे छिपते देखा है। मगर दुर्गा बाबू जैसे आदमी से ऐसी उम्मीद नही थी कि वे चूडियो की दूकान के पीछे छिप जायेंगे।

दवा विक्रेता मेरा परिचित है। नमस्ते करता है। कभी पान भी खिलाता है। मैं पान खाकर फौरन किताब की दूकान पर आ बैठता हू। उसे हैरानी है कि मैं न चलनेवाली दूकान पर क्यो बैठता हू। उसकी चलनेवाली दूकान पर क्यो नही बठता? चतुर आदमी हमेशा चलनेवाली दूकान पर बैठता है। लेकिन अपना यह रवैया रहा है कि न चलनेवाली दूकान पर बैठे हैं। या जिस दूकान पर बैठे हैं उसका चलना बन्द हो गया है। साथ के बहुत-से लोग चलनेवाली दूकानो पर, बैठते बैठते उनके मैनेजर हो गए हैं। मगर अपनी उजाड़ प्रकृति होने के कारण अभी सेल्समन तक बनने का जुगाड नहीं हुआ।

दवा विक्रेता हर राहगीर के बीमार होने की आशा लगाए रहता है। मेरे बारे में भी वह सोचता होगा कि कभी यह बीमार पडेगा और दवा खरीदने आएगा। मैं उसकी खातिर ६ महीने बीमार पडने की कोशिश करता रहा मगर बीमारी आती ही नही थी। मैं बीमारियो से कहता—तुम इतनी हो। कोई आ जाओ न। बीमारिया कहती—दवाओ के बढे दामो से हमे डर लगता है। जो लोग दवाओ मे मुनाफाखोरी की निन्दा करते हैं, वे समझें कि महगी दवाओं से बीमारिया डरने लगी हैं। वे आती ही नहीं। मगर दवाए सस्ती हो जाए तो हर किसीकी हिम्मत बीमार पडने की हो जाएगी। जो दवा में मुनाफाखोरी करते हैं वे देशवासियो को स्वस्थ रहना सिखा रहे हैं। मगर यह कृतघ्न समाज उनकी निन्दा करता है।

आखिर मैं बीमार भी पडा, लेकिन तब जब बीमारियो को विश्वास हो गया कि मेरे डाक्टर मित्र मुझे 'सम्पेल' की मुफ्त दवाओ से अच्छा कर लेंगे।

बीमार पडा तो एक ज्ञानी समझाने लगे—बीमार पडे, इसका मतलब है, स्वास्थ्य अच्छा है। स्वस्थ आदमी ही बीमार पडता है। बीमार क्या बीमार होगा। जो कभी बीमार नही पडते, वे अस्वस्थ हैं। यह बात बडी राहत देने वाली है।

बीमारी के दिनो मे मुझे बराबर लगता रहा कि वास्तव मे स्वस्थ मैं अभी हुआ हू। अभी तक बीमार नही पडा था तो बीमार था। बीमारी को स्वास्थ्य मान लेने वाला मैं अकेला ही नही हू। पूरा समाज बीमारी को स्वास्थ्य मान लेता है। जाति भेद एक बीमारी ही है। मगर हमारे यहा कितने लोग हैं जो इसे समाज के स्वास्थ्य की निशानी समझते हैं। गोरो का रग दम्भ एक बीमारी

है। मगर अफ्रीका के गोरे इसे स्वास्थ्य का लक्षण मानते हैं और बीमारी को गव से ढो रहे हैं। ऐसे मे बीमारी से प्यार हो जाता है। बीमारी गौरव के साथ भोगी जाती है। मुझे भी बचपन मे परिवार ने ब्राह्मणपन की बीमारी लगा दी थी, पर मैंने जल्दी ही इसका इलाज कर लिया।

मैंने देखा है लोग बीमारी बडी हसी खुशी से झेलते हैं। उन्हें बीमारी प्रतिष्ठा देती है। सबसे ज्यादा प्रतिष्ठा 'डायबिटीज' से मिलती है। इसका रोगी जब बिना शक्कर की चाय मागता है और फिर शीशी मे से एक गोली निकालकर उसमे डाल लेता है तब समझता है, जैसे वह शक्कर के कारखाने का मालिक है। एक दिन मैं एक बधु के साथ अस्पताल गया। वे अपनी जाच इस उत्साह और उल्लास के साथ कराते रहे, जैसे लडके के लिए लडकी देख रहे हो। बोले—चलिए, जरा ब्लड शुगर दिखा लें। ब्लड शुगर देख ली गई तो बोले—जरा पेशाब की जाच और करवा लें। पेशाब की जाच कराने के बाद बोले—लगे हाथ कार्डियोग्राम और करा लें। एक से एक नामी बीमारी अपने भीतर पाले थे, मगर जरा भी क्लेश नही। वे बीमारियो को उपलब्धिया की तरह सभाले हुए थे। बीमारी बरदाश्त करना अलग बात है, उसे उपलब्धि मानना दूसरी बात। जो बीमारी को उपलब्धि मानने लगते हैं, उनकी बीमारी उन्हें कभी नही छोडती। सदियो से अपना यह समाज बीमारियो को उपलब्धि मानता आया है और नतीजा यह हुआ है कि यह भीतर से जजर हो गया है मगर बाहर से स्वस्थ होने का अहकार बताता है।

मुझे बीमारी बुरी लगती है। बरदाश्त कर लेता हू, मगर उससे नफरत करता हू। इसीलिए बीमारी का कोई फायदा नही उठा पाता। लोग तो बीमारी से लोकप्रिय होते हैं, प्रतिष्ठा बढाते हैं। एक साहब १५ दिन अस्पताल मे भरती रहे, जो सावजनिक जीवन में मर चुके थे, तो जिन्दा हो गए। बीमारी कभी-कभी प्राणदान कर जाती है। उनकी बीमारी की खबर अखबार मे छपी, लोग देखने आने लगे और वे चर्चा का विषय बन गए। अब चुनाव लडने का इरादा रखते हैं। वे तब तक अस्पताल से नही गए जब तक एक मन्त्री ने उन्हें नही देख लिया। डाक्टर कहते—अब आप पूर्ण स्वस्थ हैं। घर जाइए। वे कहते—डाक्टर साहब, दो चार दिन और रेस्ट ले लू। फिर मुझसे पूछते—'क्यो, भैयाजी कब आनेवाले हैं। मैं देखता, उनके चेहरे पर स्वस्थ हो जाने

की बड़ी पीड़ा थी। ऐसी धोखेबाज़ बीमारी, कि मिनिस्टर के देखने के पहले ही चली गई। निदय, कुछ दिन और रहती तो तेरा क्या बिगड़ता।

बीमारी से चतुर आदमी कई काम साधता । एक साहब मामूली-सी बीमारी में ही अस्पताल में भरती हो गए। उन्हें कुछ लोगों से उधारी वसूल करनी थी और कुछ लोगों से काम कराने थे। अस्पताल से वे चिट्ठी लिखने लगे—प्रिय भाई, अस्पताल से लिख रहा हूं। बहुत बीमार हूं। बड़ संकट की घड़ी है। चलाचली की बेला है। आप रुपए भेज दें तो बड़ी कृपा हो। आधे से अधिक सहृदयों ने उन्हें रुपये भेज दिए। बाकी ने सोचा—जब चलाचली की बेला है तो कुछ दिन देख ही लिया जाए। सिधार जाए तो पैसे बच जाएंगे। एक मामूली बीमारी से उन्होंने दया जगाकर कई काम करा लिए।

चाहता हूं, पर मुझसे यह नहीं बनता। मेरे वही शुभचिंतक कह रहे थे—तुम १५ दिनों से बीमार पड़े हो और अभी तक अखबार में खबर नहीं छपाई। छपा दो और फिर देखो कितने लोग आते हैं। मेरी हिम्मत नहीं होती। अगर लोग नहीं आए तो आघात से मर ही जाऊंगा। ऐसा एक 'केस' मैं देख चुका हूं। उन भाई को मामूली बुखार ही आया था। उन्होंने सुबह के अखबार में समाचार छपा दिया और तश्तरी में ५० ६० पान रखवाकर बैठ गए। मगर दोपहर तक कोई नहीं आया और पान सूखने लगे। संयोग से दोपहर को हम दो लोग पहुंचे तो देखा वे 'नर्वस ब्रेकडाउन' की स्थिति तक पहुंच गए हैं। कहने लगे—यह साली दुनिया है। दोस्त हैं हरामज़ादे। अखबार में छप गया तब भी कोई नहीं आया। कोई किसीका नहीं है। सब रिश्ते झूठे हैं। वे रोने लगे। तब हमने बीस पचीस लोगों को उनके घर भिजवाया और प्राण बचाए।

मैं ऐसी रिस्क नहीं लेना चाहता। बिना लोगों के देखे ही अच्छा हो जाऊंगा। डाक्टर कहता है—ज़रा दिमाग को शान्त रखिए। मैं सोचता हूं—इस ज़माने में दिमाग तो सिर्फ सूअर का शांत रहता है। यहां वहां का मैला खा लिया और दिमाग शांत रखा। जो ऐसा नहीं करता और जो सचेत प्राणी है उसका दिमाग बिना मुर्दा हुए कैसे शांत रहेगा?

घुटन के पन्द्रह मिनट

एक सरकारी दफ्तर मे हम लोग एक काम से गए थे—ससद सदस्य तिवारी जी और मैं। दफ्तर मे फैलते फलते यह खबर बड साहब के कानो तक पहुच गई होगी कि कोई ससद् सदस्य अहाते मे आए हैं। साहब ने साहबी का हिदायतनामा खोलकर देखा होगा कि अगर ससद सदस्य दफ्तर मे आए तो क्या करना?—जबाब मिला होगा उसे चाय पिलाना। फिर देखा होगा, अगर उसके साथ कोई आदमी हो तो उसके साथ क्या करना? जवाब मिला होगा—उसे भी चाय पिला देना। साहब ने हिदायतनामा बद करके बड बाबू से कहा होगा—तिवारी जी का काम खत्म हो जाए तो उन लोगो को चाय पीने को यहा ले आना।

काम खत्म होने पर बडे बाबू ने कहा—साहब के साथ चाय पी लीजिए। साहबो के साथ औपचारिक चाय पीने के अनुभव मुझे हैं। उन्हें याद करके मैं कुछ घबडाया। मगर सोचा, यह अनुभव सुखदायक भी हो सकता है। हम दोनो साहब के कमरे मे घुसे। एक निहायत बनावटी मुस्कान फैली साहब के चेहरे पर। यह मुस्कान सरकार खास तौर से अपने कूटनीतिज्ञो और अफसरो के लिए बनवाती है। पब्लिक सेक्टर मे इसका कारखाना है। प्राइवेट सेक्टर के कारखाने मे बनी मुस्कान व्यापारी के चेहरे पर होती है। इसे नकली मूछ की तरह फौरन पहन लिया जाता है। जब जुल्फिकार अली भुट्टो के साथ मुस्कुराते सरदार स्वर्णसिंह की तस्वीर देखता तो चकित रह जाता। भारत-पाक युद्ध, भयकर दुश्मनी—मगर मुस्कान यह ऊची क्वालिटी की बनी हुई है।

साहब मुस्कुरा चुके तो हम तीनो के मन मे समस्या पैदा हुई कि अब क्या किया जाए। चाय तो टेबिल पर है नही। चपरासी लेने गया होगा।

हमने सोचा, इन्होंने बुलाया है तो निभाने की सारी जिम्मेदारी इनकी। वे समझे थे कि निभाने की जिम्मेदारी हम ले लेंगे।

कुछ सेकड इस दुविधा मे कटे। इतने म साहब समझ गए कि उन्हींको निभाना है।

बोले—सुनाइए तिवारी जी, दिल्ली के क्या हाल हैं ?

यह इतना व्यापक सवाल था कि इसका जवाब सिवा इसके क्या हो सकता था कि सब ठीक है। तिवारी जी जानते थे कि दिल्ली पर बम बरस जाए तो भी इन्हें मतलब नहीं।

टका सा जवाब दे दिया—सब ठीक है।

साहब को जवाब माकूल लगा।

फिर मुझसे पूछा—सुनाइए परसाई जी, साहित्य मे कैसा चल रहा है ?

मैंने भी कहा—सब ठीक चल रहा है।

बात खत्म हो चुकी। सरकारी अफसर हैं—राजनीति की बात कर नहीं सकते। साहित्य से कोई सरोकार नही।

हम तीनों की नजर दरवाजे पर है। हम तीनो चपरासी की राह देख रहे हैं।

मगर चपरासी हम तीनो का दुश्मन है। वह आ नहीं रहा। पता नहीं कितनी दूर चाय लेने गया है।

साहब अपनी कुर्सी पर हैं। जब उन्हें लगता है, वे बडे आदमी है, वे सीधे तनकर बैठ जाते हैं। मगर जब तिवारी जी अपनी छडी की मूठ पर हाथ रखते हैं तो साहब को एहसास होता है कि सामने ससद सदस्य बैठा है। वे टेबिल पर झुक जाते हैं। मैं यह कवायद बडी दिलचस्पी से देख रहा हू। साहब तने, इसी वक्त तिवारी जी ने छडी की मूठ पर हाथ फेरा, साहब ढील हुए। साहब का ध्यान छडी पर है। वे अब छडी को ही ससद सदस्य समझने लगे हैं।

मैंने अब पेपरवेट उठा लिया है और उससे जी बहला रहा हू। तिवारी जी ने छडी की मूठ पर लगातार हाथ फेरना शुरू कर दिया है कि साहब को तनने का मौका नहीं मिल रहा है। साहब ने एक पिन उठा ली है और उससे नाखून के मैल को साफ करने लगे हैं। मेरी बडी इच्छा हो रही है कि पिन से दात खोदू। इससे दूसरा काम नही होता। मैं पेपरवेट रख देता हू और एक पिन उठा लेता हू। पिन से मैं दातो का मैल साफ करने लगता हू।

हम तीनो दरवाजे की तरफ देखते हैं। फिर एक-दूसरे की तरफ बड दीन नयनो से देखते हैं। हम तीनो को चपरासी मार रहा है और हम कुछ नही कर सकते। अत्यन्त दीन भाव से साहब तिवारी जी से पूछते हैं—और

सुनाइए तिवारी जी, दिल्ली के क्या हाल हैं ?

तिवारी जी कहते है—सब ठीक ही है।

मुझसे पूछते हैं—और सुनाइए परसाई जी, साहित्य मे कसा चल रहा है ?

मैं कहता हू—ठीक ही चल रहा है।

कही कुछ नही जुड रहा। वे और हम दो पहाडियो पर इतनी दूर हैं कि कोई पुल हमे जोड नही सकता। हम तीनो कगार पर खडे हैं। नीचे गहरी खाई है। मगर एक दूसरे की आवाज भी नही सुनाई देती।

साहब को घटी की याद आती है। घटी हर साहब की नसो के तनाव को दूर करने के लिए होती है। उन्होने घटी बजाई और एक चपरासी हाजिर हो गया।

साहब ने कहा—चाय अभी तक नहीं आई।

चपरासी ने कहा—गया है साब लेन। इधर के होटल मे दूध खलास हो गया।

मारा होटलवाले ने। दूध खलास किए बैठा है। पता नही चपरासी कितनी दूर गया है।

अब क्या करें ?

साहब ने अब पेंसिल उठा ली है। वे उसे गाल पर रगडते हैं। मेरे दात सब साफ हो चुके हैं। पिन उठा नही सकता। मैं टेबिल पर तबला बजाने लगता हू।

साहब बहुत सकट मे है। वे यह जानते कि पास के होटल का दूध खत्म हो गया है तो चाय पीने को बुलाते ही नही। हम भी घोर सकट मे हैं। इन्होंने पहले चाय बुलाकर फिर हमे क्यो नही बुलाया ?

साहब पेंसिल गाल पर काफी रगड चुके। दरवाजे की तरफ देखते हैं।

फिर वही—और सुनाइए तिवारी जी दिल्ली के क्या हाल हैं ?

इस बार तिवारी जी ने तय किया कि कुछ करना ही पडगा। दिल्ली के हालात पर बात चले, तो कुछ हल्कापन महसूस हो।

वे बोल—काग्रेस के दो हिस्से हो गए। सिडिकेट निकल गई बाहर।

मेरा ख्याल था अब बात चलेगी।

पर साहब बोले—अच्छा जी।

मैं खुद तिवारी जी से दो घंटे दिल्ली की राजनीति पर बात कर चुका था। मेरे पास बढ़ाने को कुछ था नहीं।

तिवारी जी एक कोशिश फिर करते हैं—इंदिरा सरकार बिलकुल पुख्ता है।

साहब ने कहा—अच्छा जी।

तिवारी जी निराश होकर छड़ी की मूठ पर हाथ फेरने लगे।

मैंने टेबिल पर तबला बजाना शुरू कर दिया।

कोई उपाय कारगर नहीं हो रहा।

साहब ने फिर कहा—और सुनाइए तिवारी जी, दिल्ली के क्या हाल हैं?

इस बार तिवारी जी कुछ नहीं बोलते। वे लगातार छड़ी की मूठ पर हाथ फेर रहे हैं।

हम तीनों की हालत खराब है। मेरा तबला बजाने का जी भी नहीं हो रहा।

इसी वक्त चपरासी ट्रे लेकर आ गया। हम सब मुर्दे जैसे जाग पड़े। साहब के चेहरे पर पहले ऐसा भाव आता है कि उसे चांटा मार दें। फिर दूसरा भाव आता है जैसे उसके चरण छू लें। मैं खुद गुस्से से भरा बैठा था। मगर उसके आते ही मेरा मन उसके प्रति कृतज्ञता से भर गया।

हमने बहुत फुर्ती से चाय सुड़की। उठे। बोले—अच्छा अब इजाजत दीजिए।

उन्होंने फौरन इजाजत दी। बोले—अच्छा, जी। थैंक यू वेरी मच।

हमें उन्हें धन्यवाद देने का भी होश हवास नहीं था।

बाहर आकर हम दोनों ने पहले खूब जोर से चार छः सांसें लीं, फिर गाड़ी में बैठे। रास्ते भर हम एक-दूसरे से नहीं बोले।

उतरते वक्त अलबत्ता मैंने कहा—और सुनाइए तिवारी जी, दिल्ली के क्या हाल हैं?

तिवारी भुनाकर बोले—यार, अब भूलने भी नहीं दोगे।

क्लीन शेव के बाद भी आचार्य जी को एक्सटेंशन नहीं मिला।

आचाय जी के पिता झर्राटेदार मूछें रखते थे। वे अंग्रेज सरकार के नौकर थे। उनकी मूछो की सिफत यह थी कि आदमी और मौका देखकर बर्ताव करती थी। वे किसीके सामने 'आई डोंट केअर' के ठाठ की हो जातीं। फिर किसी और के सामने वे मूछो पर इस तरह हाथ फेरते कि वे 'आई एम सॉरी सर' हो जाती। मूछो पर इस दुहरे स्वभाव के कारण वे सफल और सुखी आदमी रहे। आचाय जी जब जवान थे, और आचाय नही सिफ लेक्चरर थे, तब उन्होंने पिताजी की तरह मूछें रख ली थी। वे इन मूछो से रीडरी की तलाश करते थे, जसे कोई कोई कीट मूछ के दो लम्बे बालो से राह खोजते हैं। पर मूछो के ही कारण रीडरी दूर हटती जाती थी। तब आचाय जी ने पिता और पौरुष दोनो से क्षमा मागकर मूछें आधी करवा ली। उनका डक चला गया और वे मात्र ब्रश रह गइ। वे रीडर हो गए। आगे आधी मूछें भी प्रोफेसर बनने मे बाधा डालने लगी तो उन्होंने उन्हें कतरवाकर नाक के दोनो तरफ मक्खी बिठा ली और प्रोफेसर हो गए। आगे रिटायर होने का वक्त आया और वे एक्सटेंशन की कोशिश मे लग गए। अब उन्होंने मक्खी भी साफ करा लीं और क्लीन शेव हो गए। उन्हें एक एक्सटेंशन मिल गया।

मगर अब मूछो का कुछ नहीं बचा था, जो साफ किया जा सके। इस लिए उन्हें दूसरा एक्सटेंशन नही मिला।

आचाय जी मेरे बड़ भाई के मित्र थे। बड़ भाई की मृत्यु हो चुकी थी। आचाय जी इस नाते मुझे शुरू से ही स्नेह देने लगे। वे मुझे भुजाओ मे जकड लेते और मुझे लगता, मेरे गाल पर साहित्य झाड़ू लगा रहा है। आगे मुझे लगता है, मेरे गाल पर आलोचना ब्रश कर रही है। फिर मुझे लगने लगा मेरी रचनाओ पर समीक्षा की मक्खियां भिनभिना रही हैं क्लीन शेव के बाद भी वे उसी तरह मुझे गले लगाकर गाल पर गाल रख देते और मुझे लगता, हजारो केंचुए मेरे शरीर से लिपटे हैं। मुझे अपने-आप से घिन होने लगती।

गोल चेहरा। चेहरे पर बच्चे जैसी पवित्रता। आखों मे अपार स्नेह। नाक की मुद्रा पे निश्छलता। पूरे मुख पर यह भाव कि मैं तो इतना स्नेही, भला और परोपकारी हू, पर सारी दुनिया मुझपर अन्याय कर रही है। वे जब भी मुझे मिलते मुझे यही बोध होता कि भले आदमी दुनिया मे कितने दुखी रहते हैं। कई सालो तक मैं उन्हें सामन से देखता रहा और उनका यही पावन रूप मुझे दिखता। एक दिन मैंन कोण से उनकी नाक को अनायास देख लिया और मरे भीतर एक झटका सा लगा। नाक सामन से कुछ और बताती थी और साइड से कुछ और। मुझे आज तक उनकी नाक का वह बाजू से देखना याद है। तब उनकी नाक बहुत कुटिल और क्रूर लगी थी। आदमी को समझने के लिए सामने स नही, कोण से देखना चाहिए। आदमी कोण से ही समझ मे आता है। उनका वह सहज, स्नेहिल मुखड़ा मुझे भयानक लगा। मैंने उनकी आखो को फिर देखा। उनम स्नेह के पीछे न जान क्या क्या छिपा था।

उस दिन से मैं आचाय जी से डरने लगा। वे मुझे गले लगाते, तो मेरा दम घुटता। मैं हृदय से चाहता कि वे मुझसे नफरत करें, पर वे स्नेह छोड़ते ही नही थे और मुझे देखते ही भुजाओ मे भर लेत। उनके स्नेह के अनुपात से मैं उनके स्वाथ का अनुपात समझन लगा। तीस सेकड गले लगाकर वे मेरी ४ ६ किताबें ले गए। एक मिनट आलिंगन करके उन्होंने अपने प्रतिद्वन्द्वी के खिलाफ मुझस अखबार म लिखवा लिया। डेढ मिनट के आलिंगन मे उन्होने मुझसे अपने बारे मे लेख लिखवा लिया। दो मिनट मुझे हृदय से लगाया और मुझसे ३ ४सौ कापिया जचवा ली। लगातार एक सप्ताह तक मुझे तीन मिनट की दिन के हिसाब से गले लगाकर उन्होने अपन आवारा बटे की शादी मेरी मारफत मरे परिवार की एक लडकी स करा ली—और लडकी के मा बाप मुझे अभी तक गाली देते हैं। हृदय से लगान पर भी उन्हें लगता कि जोर कम पडेगा, तो व मेरे बड भाई की याद करके आखा म आसू ले आते और मैं समझ जाता कि आज कोई बडा काम मुझसे करवाएगे।

मैं सोचता कि क्या मेरे प्रति ही इनका इतना स्नेह है। क्या सिफ मुझे ही गले लगाते है। नहीं, वे बहुत सुलझे हुए विचार के आदमी थे। उनके विचारों मे कोई दुविधा नही थी। किसस कितना लाभ उठाना है, इसका हिसाब उनके

मन मे होता था और वे इसी हिसाब से अपने हृदय का स्नेह उद्वेलित कर देते थे।

मैं उन्हें समझ गया था। एक बार वे एक शहर पन्द्रह दिन के लिए गए। उन्हें मुफ्त म ठहरने और खाने की सुविधा चाहिए थी। वे जानते थे, उस शहर म मेरा एक घनिष्ठ और सम्पन्न मित्र रहता है। जाने के १५ दिन पहले से उन्होंने मेरे ऊपर स्नेह उडेलना शुरू कर दिया। मेरे तमाम कपड भीग गए। मैं इतजार कर रहा था स्नेह की परिणति का। आखिर जाते वक्त वे उस मित्र के लिए मेरी चिट्ठी ले गए। मित्र ने उनका बढिया इतजाम कर दिया। महीना भर बाद वह मित्र मुझे मिला तो उसने कहा कि आचाय जी का मैंने अच्छा इतजाम कर दिया था। उन्हें कोई तकलीफ नही हुई। मैंने पूछा—पर उन्होने तुमसे मेरी निंदा की होगी न ? सच बताओ। उसने झिझककर कहा—हा, की थी ! पर तुमने कैसे जाना ? मैंने कहा—मैं जानता हू, वे बहुत सुलझे हुए विचारो के आदमी हैं। जिससे फायदा उठा रहे हैं, उसकी प्रशसा और बाकी सबकी निंदा—ऐसा क्लीअर थिंकिंग है उनका।

बडे सुलझे विचार ! जिसे नष्ट करने की कोशिश मे लगे हैं, वह अगर मर जाय तो रो पडेंगे। कविता सुनकर भाव-विह्वल हो जाएगे आखें छल छला आएगी, पर आसू पोंछकर जूनियर को सस्पेंड कराने की कारवाई करने लगेंगे। खुद कविता सुनाएगे और मानवी करुणा से हम सबको पावन कर देंगे, पर कविता सुनाने के बाद किसी छात्र के नम्बर घटाकर उसे फेल कर देंगे। प्रेमिका को गले लगाएगे तो हिसाब भी करते जाएगे कि इसका नेकलेस चुराकर कैसे बेचा जा सकता है। बच्चे को चूमेंगे तो वात्सल्य के साथ यह हिसाब भी करते जाएगे कि बडा होकर यह कितना कमाएगा और मुझे उसमे से कितना देगा।

बड सुलझे विचार ! मैं ३ ४ सालो के लिए दूसरे शहर चला गया। सोचा, अब उनके स्नेह से मुझे छुटकारा मिलेगा। पर उनकी जब-तब चिट्ठिया आ जाती। नीचे लिखा होता—'तुम्हारा ही' या 'केवल तुम्हारा'। हर ऐसी चिट्ठी के बाद मैं इतजार करता कि अगली चिट्ठी मे ये क्या काम बतात हैं। नय वष की मगलकामना वे भेजते, तो मैं समझ जाता कि मेरे मारफत इस साल अपने मगल का हिसाब उनके पास तैयार होगा।

'केवल तुम्हारा' की दो तीन चिट्ठियो के बाद उन्होने पाठ्य पुस्तक मे मेरी एक कहानी ले ली। प्रकाशक से उन्होने कह दिया होगा कि इस लेखक से मेरे घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। इसे कुछ देने की जरूरत नही है। सग्रह के हर लेखक के बारे मे उन्होने यही कह दिया होगा और प्रकाशक से रुपये लेकर पुस्तक को कोर्स मे लगवा दिया। साहित्य मे बधुत्व से अच्छा धधा हो जाता है।

मैं अपने आपको अब धिक्कारने लगा था। सोचता—मैं कितना सत्त्व हीन हू। हर बार परास्त हो जाता हू। इस बार मैंने उनका सामना करने का तय किया। मैंने उन्हें लिखा कि आपने मुझे प्रकाशक से रुपये नही दिलवाए और कहानी ले ली। उनका जवाब आया—इतने वर्षों के स्नेह के बाद क्या मुझे इतना अधिकार भी नही है कि मैं तुम्हारी एक कहानी ले लू—केवल तुम्हारा। मैंने अब इन 'केवल मेरे' से निपटने की ठान ली। मैंने उन्हे लिखा—मेरे प्रति आपका स्नेह है इस लिए मैं नुकसान उठाऊ। और प्रकाशक के प्रति आपका स्नेह नही है इसलिए वह फायदा उठाए। ऐसा स्नेह मानव जाति के इतिहास मे पहली बार आपके द्वारा आविष्कृत हुआ है।

चिट्ठी का उन्होने जवाब नही दिया। १५ दिन बाद मैंने वकील से प्रकाशक को नोटिस दिलवा दिया। अब मानवी सबधो का एक नया दौर शुरू हुआ। प्रकाशक को वे लिखकर दे चुके थे कि मेरी लिखित अनुमति उनके पास है। प्रकाशक ने उन्हें मेरा नोटिस बताया होगा और तब उन्होने मुझे लिखा कि मैं सकट मे पड गया हू और तुम मुझे अनुमति भेजकर उबार लो—तुम्हारा अपना। पर मैं 'मेरे अपने' से निपटने की ठान चुका था। मैंने एक नोटिस प्रकाशक को और दिलवाया कि मुझे १५ दिन के भीतर हजार रुपया दो, वरना कापीराइट एक्ट के मुताबिक दीवानी और फौजदारी दोनो मुकदमे चलाए जाएगे।

मुझे मालूम हुआ कि यह नोटिस पाकर प्रकाशक ने आचार्य जी पर धोखाधडी का मुकदमा दायर कर दिया। मेरा मन फिर कच्चा हुआ, पर मैंने मन को एक थप्पड लगाया और सख्त होकर बैठ गया। अब मुझे जो चिट्ठी मिली उसमे नीचे लिखा था—'आपका दासानुदास'। आग्रह वही था कि मैं अनुमति लिखकर भेज दू।

मैंने अनुमति फिर भी नही भेजी। तब उनकी चिट्ठी आई कि मैं अमुक तारीख को तुमसे मिलने ही आ रहा हू। एक अरसे से तुम्हें देखा नही है। तुम्हें देखने की ललक एकाएक मन मे उठ आई है।

मैं ललक को समझ गया। मन फिर फिसला तो मैंने उसे इस बार दो चाटे लगाए।

नियत तारीख को वे आ गए। मैं उन्हे घर के बाहर ही मिल गया। वे एकदम विह्वल हो गए। आखें बद कर ली। उन्हे चक्कर आने लगे। बोले—इतने दिनो बाद इस घर मे आया हू, तो तुम्हारे भाई की याद से तडप उठा हू। ओह कितना नोबल था वह! मुझे लगा, ये बेहोश होकर गिर पडेंगे। मैंने कहा—चलिए, भीतर चलिए। उन्होने मेरा कधा पकड लिया। बोले—ठहरो जरा मुझे सभल जाने दो भैया।

मैं समझ गया, ये बड सकट मे पड गए, वरना मेरे भाई की यादें का इतना लम्बा उपयोग न करते। मैं उन्हें सहारा देकर भीतर ले गया। वे बठे। पानी मागा। कहने लगे—भावुक हू न एकदम विचलित हो जाता हू। किसी प्रिय की स्मृति से।

अब उन्होंने सकटो का वर्णन किया। मेरे मन ने फिर कच्चापन दिखाया, पर मैंने उसे फिर चाटा मारा। मैंने तय किया कि आज मैं इन्हें नफरत करने के लिए मजबूर कर दूगा। मैंने उनसे साफ कह दिया—मैं स्नेह और सकोच में आपके और दूसरो के हाथो काफी पिट चुका। अब मैं यह काम बन्द कर रहा हू। स्नेह की दूकान मैंने बढा दी। अब अनुमति तभी लिखकर दूगा जब मुझे रुपये मिलेंगे। मेरा ख्याल था अब इनके चेहरे पर क्रोध और नफरत आएगी। पर मैं निराश हुआ। वहा पहले जैसा ही स्नेह था। मैं इस आदमी के साथ कैसा करू? यह अभी भी स्नेह के हथियार का नही छोड रहा है। जरा देर के लिए यह हथियार डाल दे तो मैं इसे दबोच लू और रुपये वसूल कर लू। पर वह तो हथियार पर धार कर रहा था। मुझे इस हथियार का सामना करना ही पडेगा। मैंने कहा—किसी तरह मैं समझौता नही करूगा। मुझे रुपये चाहिए ही। भाई के लिए हम लोग बाद मे रो लेंगे।

उन्होने बटुआ निकाला। मैंने चेहरा देखा। नफरत अब भी नही थी। क्लेश था। बटुआ खोलकर उन्होने सौ का नोट निकाला। नफरत अब भी नही

थी मुख पर। बस, क्लेश गाढा हो गया था, जैसे नोट नहीं प्राण निकालकर दे रहे हो। मैंने नोट ले लिया और अनुमति लिख दी। सोचा, अब स्नेह सम्बन्ध खत्म हो गए। मैं हल्का हो जाऊगा। पर जाते वक्त उन्होंने मुझे फिर हृदय से लगा लिया। सोचा, इनके स्नेहिल चेहरे को ज़रा कोण से देख लू, पर हिम्मत नही हुई।

मैं लौटकर आचार्य जी के शहर आ गया। वे विभागाध्यक्ष थे। बडे बगले मे रहते थे। मेरे आने की खबर पाते ही उन्होने मुझे बुलवा लिया और फिर गले से लगा लिया। स्नेह की डोर मैं बार-बार काटता और वे जोड लेते। मेरा अदाज है, पहले वे लोभ के लिए स्नेह करते थे, अब शायद थोडे डर के कारण।

विभाग मे काम करने का उनका अपना तरीका था। वे शोध करवाते थे। शोध छात्र लेने मे वे एक सिद्धान्त का पालन करते थे। एक गल्ला व्यापारी का लडका लेते, एक कपडा व्यापारी का, एक होजरी के दुकानदार का। फिर कोई जगह खाली बचती तो सब्जी के व्यापारी के लडके को ले लेते। कभी घी और किराना व्यापारी के लडके को भी चास मिल जाता। हर साल विश्व विद्यालय मे लडके शोर मचाते— आवश्यकता है एक किराना व्यापारी के लडके की जिसे डाक्टरेट चाहिए। शोध का निर्देश किराने की मात्रा और क्वालिटी पर निर्भर करेगा। किराने के 'सेम्पल' सहित दरख्वास्त दो।

इस हल्ले गुल्ले से अविचलित आचार्य जी विद्या की साधना कराते जाते थे। वे सुलझे विचारो के आदमी थे।

रिटायर होने तक वे कुछ दार्शनिक हो गए। वीतराग लगने लगे। वे एक्सटेंशन की कोशिश मे थे। एक्सटेंशन उन्हें मिल भी गया।

चपरासियो से काम लेकर उन्होंने बगले के सामने बहुत अच्छा बागीचा लगवा लिया था। रग बिरगे खूबसूरत फूल। एक्सटेंशन की अवधि मे उनका प्रकृति प्रेम बहुत बढ गया था। मैं उनके यहा कभी-कभी जाता। वे बागीचे मे बैठे मिलते। कहते—प्रकृति के सौंदर्य मे से ईश्वर झाकता है।

वे किसी भी कली के पास बैठ जाते। कहते—तुम इस कली का स्पदन सुन रहे हो? नही न। मैं सुन रहा हू। और ज़रा इस फूल के जीवन का उत्स देखो। इस पत्ते को देखो। किस उल्लास से लहरा रहा है।

वे फूल को बच्चे की तरह सहलाते। कहते—ये भी मनुष्य हैं। प्रकृति मे प्राण हैं। ये फूल, पत्ते, पौधे मेरी सतानें हैं। 'मैं' अपने बच्चो की तरह इन्हें प्यार करता हू। एक फूल कुम्हलाता है तो मुझे लगता है, मेरा जीवन कुम्हला रहा है। एक पत्ती सूखकर गिरती है, तो लगता है, मेरी एक भुजा टूट गई। कोई कली झड जाती है, तो मुझे ऐसा क्लेश होता है जैसे मेरे प्राण का एक अश विसर्जित हो रहा हो।

वे मुग्ध हो जाते। आनन्द विभोर हो जाते। फूल पत्तो के लिए अपार ममता उनके नयनो मे होती। तब वे मुझे भव्यतर मनुष्य लगते और पिछला सब कुछ भुलाकर मैं उनपर श्रद्धा करने लगता। कैसा दयालु, भावुक आदमी है, जो फूल और पत्ते के लिए रोता है।

बागीचा सवरता जाता था। साथ ही दूसरे एक्सटेंशन की कोशिश चलती जाती। कविमन सुबह फूल-पत्तो को सवारता और बाकी दिन एक्सटेंशन की कोशिश मे लगा रहता।

एक दिन आचार्य जी को अतिम बार बता दिया गया कि दूसरा एक्सटेंशन नहीं मिलेगा और दो महीने बाद याने ३१ जनवरी को उन्हें चले जाना है।

सुबह का वक्त था। मैं उनके घर पहुचा। वे इस वक्त हमेशा बागीचे मे मिलते थे। आज बरामदे मे बैठे मिले।

बोले—कल खबर मिल गई। एक्सटेंशन नही मिलेगा।

उन्होंने आखें बन्द कर ली।

खोली तो मैं उनकी आखें देखकर काप गया। बूढी आखो मे से आग निकल रही थी। उन्होने बागीचे को देखा। मुझे लगा, फूल-पत्ते झुलस गए होगे।

सास खीचकर बोले—आखिर एक्सटेंशन नही मिला। यहा अब दो महीने बाद डा० दीनानाथ आ जाएगा। डा० दीनानाथ !

उन्होने उसी दिन नौकरो को हुक्म दिया कि बागीचे मे पानी नही दिया जाएगा।

पानी के बिना पौधो ने, धरती से जितना प्राण रस खीच सकते थे, खींचा। फिर सूखने लगे।

मैं उनके घर कभी-कभी जाता। वे बरामदे मे बैठे होते और सूखते

पौधों को देख रहे होते।

कहते—उस गुलाब की हालत देख रहे हो। सूख रहे हैं बेटे!

—एक्सटेंशन नहीं मिला।

—उस मौलसिरी की हालत भी पतली है।

—एक्सटेंशन नहीं मिला।

—ये गमले तो अभी से सूख गए।

—एक्सटेंशन नहीं मिला।

—यहा डा० दीनानाथ आएगा।

अपने बढाए, पाले, पोसे पौधा को आचाय जी सुखा रहे थे। बरामदे में बैठकर उनका सूखना देखते थे और बीच बीच मे उसास लेकर कहते—एक्सटेंशन नही मिला। अब यहा डाक्टर दीनानाथ आएगा!

दो महीने में बागीचा पूरा सूख गया। वे फूल नहीं थे। जिनका स्पदन वे सुनते थे। वह कली नही थी, जिसके जीवन का उत्स वे अनुभव करते थे। वे पत्ते झड गए थे जिनका उल्लास देखकर वे मुग्ध होते थे। बागीचे में अब सूखे नंगे पौधे खडे थे क्योंकि जमीन उन्हें जकडे थी।

३० तारीख को आचाय जी ने सामान बधवाया। दूसरे दिन उन्हें जाना था। दिन भर वह व्यस्त रहे। शाम ढली। इसी समय गाधी जी की हत्या हुई थी।

दिसम्बर की रात। कडाके की ठड थी। आचाय जी ने नौकरों से वे सूखे डठल कटवाकर बागीचे मे इकटठे करवाए। एक ढेर लग गया। उसमें उन्होंने आग लगा दी और बडी रात तक अलाव तापते रहे।

दूसरे दिन आचाय जी चले गए। इस सतोष से गए कि उन्होंने डा० दीनानाथ की आग ताप ली थी।

मैं उन्हें विदा करने गया था। वे घर से निकले। जले हुए बागीचे की तरफ देखा।

आखिरी बार बोले—एक्सटेंशन नहीं मिला।

और मुह फेरकर स्टेशन चल दिए।

यह जो फोन लग गया है उसके लिए ३५० रुपये खरे जी ने जमा किए थे। लिहाजा उन्हें अमर करना जरूरी है। इस अमर कृति के पहले ही वाक्य मे उनका नाम आ गया है। अब वह अपने कृतित्व से अपनी उम्र बढाने की झंझट मे न पडें। उनका काम मैंने कर दिया है। तीसवी शताब्दी के लगभग कोई शोध छात्र पैदा होगा, जो विभाग के अध्यक्ष को अपने गाव का शुद्ध घी खिलाकर और उनकी पत्नी को बच्चे के गुच्छे समेत प्रदर्शनो मे झूला झुलाकर ज्ञान की साधना करेगा। वह यह पता जरूर लगा लेगा कि बीसवी सदी में यह कौन भला मानस हो गया है, जो लेखक के घर भी फोन लगवा देता था।

जो नही है, उसे खोज लेना शोधकर्त्ता का काम है। काम जिस तरह होना चाहिए, उस तरह न होने देना विशेषज्ञ का काम है। जिस बीमारी से आदमी मर रहा है, उससे उसे न मरने देकर दूसरी बीमारी से मार डालना डाक्टर का काम है। अगर जनता सही रास्ते पर जा रही है, तो उसे गलत रास्ते पर ले जाना नेता का काम है। ऐसा पढाना कि छात्र बाजार मे सबमे अच्छे नोट्स की खोज मे समर्थ हो जाये, प्रोफेसर का काम है।

खैर, जिसका जो काम है, वह जाने। मेरे काम हैं—अमर करना और 'आल इंडिया' करना। आल इंडिया कर देने का रेट सौ रुपये है। सौ रुपये लेकर मैं ऐसा लेख लिखता हू जो छपते ही मर जाए। मेरे दाता का नाम सारे देश में फैल जाता है, पर अमर नही होता। लेख की क्वालिटी ही ऐसी होती है कि वह छपते ही मर जाता है।

एक साहब से मैंने सौ रुपये ले लिए थे। इतनी उम्र हो गई पर किसी-का पैसा वापस करने का गंदा विचार मेरे मन मे कभी नहीं आया। पर सभी का मन तो मेरे जैसा निर्मल होता नही है। उन सज्जन के मन में पैसे सम्बन्धी गन्दा विचार था। मैं हू साहित्यकार और साहित्यकार का धर्म है मनुष्य के मन को निर्मल करना। मैं धर्म से गिर जाता अगर यह बर्दाश्त करता कि एक भले मानस के मन मे सौ रुपये पडे-पडे सडा करें। मैंने एक लेख मे उनके नाम का उल्लेख कर

उनके पास बम्बई और दिल्ली से दोस्तो की चिट्ठिया आ गईं कि तुम्हारा
: लिया। इससे उनका मन मेरी तरह निमल हो गया। सडे रुपये
गए। मेरा धम निभ गया। साहित्य का ठीक ढग से उपयोग किया जाए
ज को बडे फायदे होते हैं।

शहरा के अखबारो मे शादी, स-तान और फोन के समाचार छपते हैं।
क अखबार मे शादी के समाचार 'चिर जीवहु जोरी जुर' शीपक के
ते हैं। बिहारी का वह दोहा यह है—

चिर जीवहु जोरी जुरै क्यो न स्नेह गम्भीर
को घटि य वपभानुजा वे हलधर के बीर

ैं इस फोन का समाचार छपा था। ऊपर कि-हीं मिश्र जी के घर 'पुत्र-
ी प्राप्ति का समाचार था और उसके ठीक नीचे मेरे इस 'फोन रत्न'
तब मिसेज मिश्र को पुत्र की प्रसव पीडा हो रही थी, तब मैं फोन की
ीडा भोग रहा था। साढ़े तीन सौ रुपयो का एकाएक प्रब-ध करना
प्रसव-पीडा है। इसे मिसेज मिश्र नही जानतीं, मिश्र जी जानते हैं।
के खच क लिए रुपयो का इ-तजाम करने में मिश्र जी को जितनी
ई होगी, उतनी पीडा मे दस बच्चे पैदा हो जाते। अगर प्रकृति नर को
व करने की सुविधा द दे, तो मिश्र जी मिसराइन से कहेंगे—तू रुपयों
ज़ाम कर। बच्चा मैं दिए देता हू, और मिश्र जी झझट से बरी होकर
ी होम मे दाखिल हो जाएगे।

पा था—अमुक मिश्र जी को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। बधाई! मुझे
झ मे नहीं आता कि पैदा होते ही कस जान लिया कि बेटा जी रत्न हैं,
कड नहीं हैं। ऐसा नहीं हो सकता कि अभी पुत्र कहें और अगर आगे
नेकले तो रत्न कहने लगें। वैसे भी बिगडे लडको को रतन' कहते ही
च्छा 'सुपुत्र' क्या होना है? और 'धमपत्नी क्या चीज है? धर्मपत्नी
है तो अधमपत्नी क्या नहीं होती कोई? क्या धर्मादा मे किसी पत्नी को
त्नी' कहन हैं? विकट कहलाए तब 'धमपत्नी कहलाती हैं। इधर एक
है जो पति को पीट तक दनी है, पर पति जब उसका परिचय देते हैं,
हते हैं—यह मेरी धर्मपत्नी है। और धमपत्नी भी अपने को पतिव्रता
ी है—पति को चाहे पीट सू, पर पराय आदमी स नजर नहीं मिलाती।

धमपत्नी होती है, धमपिता होता है। किसी दूसरे आदमी को जो वास्तविक पिता नही है, पिता मान लिया जाए, तो वह धमपिता कहलाता है। भाषा के बडे छल है। और फिर धम के मामले मे मैं शुरू से 'कन्फ्यूज्ड' रहा हू।

मेरा एक प्रगतिशील दोस्त कहता है—ये सु, रत्न, मगल, शुभ, धम आदि भाषा के सामन्ती सस्कार हैं। किसी भी प्रगतिशील को सुपुत्र होने से इन्कार कर देना चाहिए। मैं बचपन मे ही इन्कार कर चुका हू। मैं आदि प्रगतिशील हू। मगर विवाहित प्रगतिशील अपनी बीवी को अधम-पत्नी कहे तो ठीक रहेगा।

पुत्ररत्न कहो, चाहे सुपुत्र कहो—कुल वास्तविकता यह है कि परिवार-नियोजन के तमाम प्रचार के बावजूद मिश्र जी के घर एक लडका हो गया। ऐसे समाचारो के प्रकाशन पर रोक लगनी चाहिए। इनसे प्रोत्साहन मिलता है। खरबूजे देखकर खरबूजा रग बदलता है। एक बच्चे के पैदा होने का समाचार पढकर दूसरा बच्चा पैदा होने को उत्सुक हो जाता है। इस जमाने मे बच्चा होना शम और सकट की बात है। अगर समाचार छपना ही है, तो परिवार नियोजन की भावना के अनुकूल ऐसा समाचार छपना चाहिए—'अमुक आदमी के यहा कल लडका हुआ। धिक्कार है। सारा राष्ट्र उसपर थूक रहा है।'

यह जो 'दो या तीन बच्चे बस' वाला पोस्टर है, यह भी गलतफहमी फैलाने लगा है। इसमे दो छोटे छोटे बच्चों के साथ स्त्री बैठी है। एक स्त्री ने दीवार पर लगे इस पोस्टर को देखकर पोस्टर वाली से कहा—ए भेण जी, हमको मत बनाओ, तुम्हारे कुल दो ही नहीं हैं। उनको भी तो जोडो जो पढने गए हैं। चतुर स्त्री समझ गई कि पोस्टर वाली ने दो बडे बच्चो को तो पढने भेज दिया और ये दो छोटे हमे दिखाकर बुद्धू बना रही है। परिवार नियोजन वाले इस पोस्टर मे सिफ एक बच्चा मा की गोद मे रखें और दूसरे को स्कूल जाता बताए। नीचे यह लिखें—बाई, हमारे दो ही हैं, और दूसरा पढने गया है।

छोटे शहर की मानसिकता अलग होती है। यहा फोन मिलने पर बधाई दी जाती है। मैं जो फोन की बात कर रहा हू, तो मुझे अपने एक मित्र की याद

बरात मे जाना कई कारणा से टालता हू। मगल कार्यों मे हम जसे चढ़ी उम्र के कुवारो का जाना अपशकुन है। महेश बाबू का कहना है, हम मगल कार्यों से विधवाओ की तरह ही दूर रहना चाहिए। किसीका अमगल अपने कारण क्या हो! उन्हें पछतावा है कि तीन साल पहले जिनकी शादी मे वह गए थे, उनकी तलाक की स्थिति पैदा हो गई है। उनकी यह शोध है कि महाभारत युद्ध न होता, अगर भीष्म की शादी हो गई होती। और अगर कृष्ण मेनन की शादी हो गई होती, तो चीन हमला न करता।

सारे युद्ध प्रौढ कुवारो के अह की तुष्टि के लिए होते हैं। १६४८ मे तेलगाना मे किसानो का सशस्त्र विद्रोह देश के वरिष्ठ कुवारे विनोबा भावे के अह की तुष्टि के लिए हुआ था। उनका अह भूदान के रूप मे तुष्ट हुआ।

अपने पुत्र की सफल बरात से प्रसन्न मायाराम के मन मे उस दिन नागपुर मे बडा मौलिक विचार जागा था। कहने लगे—बस, अब तुम लोगो की बरात मे जाने की इच्छा है। हम लोगो ने कहा—अब किशोरो जैसी बचकानी बरात तो होगी नहीं। अब तो बरात ऐसी होगी कि किसी को भगाकर लाने के कारण हथकडी पहने हम होगे और पीछे चलोगे तुम लोग, जमानत देनेवाले ऐसी बरात होगी। चाहो तो बड भी बजवा सकते हो।

विवाह का दृश्य बडा दारुण होता है। विदा के वक्त औरतो के साथ मिलकर रोने को जी करता है। लडकी के बिछुडने के कारण नही, उसके बाप की हालत देखकर लगता है, इस कौम की आधी ताकत लडकियो की शादी करने मे जा रही है। पाव ताकत छिपाने मे जा रही है—शराब पीकर छिपाने मे, प्रेम करके छिपाने मे, घूस लेकर छिपाने मे —बची हुई पाव ताकत से देश का निर्माण हो रहा है—तो जितना हो रहा है बहुत हो रहा है। आखिर एक-चौथाई ताकत से कितना होगा।

यह बात मैंने उस दिन एक विश्वविद्यालय के छात्र सघ के वार्षिकोत्सव में कही थी। कहा था—तुम लोग क्रातिकारी तरुण-तरुणिया बनते हो। तुम

इस देश की आधी ताकत को बचा सकते हो। ऐसा करो, जितनी लडकिया विश्वविद्यालय मे है, उनसे विवाह कर डालो। अपने बाप को मत बताना। वह दहेज मागने लगेगा। इसके बाद जितने लडके बचें, वे एक दूसरे की बहन से शादी कर लें। ऐसा बुनियादी क्रातिकारी काम कर डालो। और फिर जिस सिगडी को जमीन पर रखकर तुम्हारी मा रोटी बनाती है, उसे टेबिल पर रख दो, जिससे तुम्हारी पत्नी सीधी खडी होकर रोटी बना सके। २० २२ सालो में सिगडी ऊपर नही रखी जा सकी और न झाड़ मे चार फुट का डण्डा बाधा जा सका। अब तक तुम लोगो ने क्या खाक क्रांति की है।

छात्र थोडा चौंके। कुछ ही हो करत भी पाए गए। मगर हुआ कुछ नही।

एक तरुण के साथ साला मेहनत करके उसके खयालात मैंने सवारे थे। वह शादी के मडप मे बैठा तो ससुर से बच्चे की तरह मचलकर बोला—बाबू जी, हम तो वेस्पा लेंगे। वेस्पा के बिना कौर नहीं उठाएगे। लडकी के बाप का चेहरा फक्! जी हुआ, जूता उतारकर पाच इस लडके को मारू और फिर २५ खुद अपने को। *समस्या यों सुलझी कि लडकी के बाप ने साल भर मे* वेस्पा देने का वादा किया, नेग के लिए बाजार से वेस्पा का खिलौना मगाकर थाली मे रखा, फिर सवा रुपया रखा और दामाद को भेंट किया। सवा रुपया तो मरते वक्त गोदान के निमित्त दिया जाता है न ! हा, मेरे उस तरुण दोस्त की प्रगतिशीलता का गोदान हो रहा था।

बरात की यात्रा से मैं बहुत घबराता हू, खासकर लौटते वक्त जब बराती बेकार बोझ हो जाता है। अगर जी भरकर दहेज न मिले, तो वर का बाप बरातियो को दुश्मन समझता है। मैं सावधानी बरतता हू कि बरात की विदा के पहले ही कुछ बहाना करके किराया लेकर लौट पडता हू।

एक बरात से वापसी मुझे याद है।

हम पाच मित्रो ने तय किया कि शाम ४ बजे की बस से चलें। पन्ना से इसी कम्पनी की बस सतना के लिए घटे भर बाद मिलती है, जो जबलपुर की ट्रेन मिला देती है। सुबह घर पहुच जाएगे। हममे से दो को सुबह काम पर हाजिर होना था, इसलिए वापसी का यही रास्ता अपनाना जरूरी था। लोगों ने सलाह दी कि समझदार आदमी इस शाम वाली बस से सफर नहीं करते।

क्या रास्ते मे डाकू मिलते हैं ? यहा बस डाकिन है।

बस को देखा तो श्रद्धा उमड पडी। खूब वयोवृद्ध थी। सदियो के अनुभव के निशान लिए हुए थी। लोग इसलिए इससे सफर नहीं करना चाहते कि वृद्धावस्था में इसे कष्ट होगा। यह बस पूजा के योग्य थी। उसपर सवार कसे हुआ जा सकता है !

बस कम्पनी के एक हिस्सेदार भी उसी बस से जा रहे थे। हमने उनसे पूछा—यह बस चलती भी है ? वह बोले—चलती क्यो नही है जी ! अभी चलेगी। हमने कहा—वही तो हम देखना चाहते हैं। अपने-आप चलती है यह ?—हा जी, और कसे चलेगी ?

गजब हो गया। ऐसी बस अपन आप चलती है !

हम आगा-पीछा करने लगे। पर डाक्टर मित्र ने कहा—डरो मत, चलो ! बस अनुभवी है। नई नवेली बसो से ज्यादा विश्वसनीय है। हमे बेटो की तरह प्यार से गोद मे लेकर चलेगी।

हम बैठ गए। जो छोडने आए थे, वे इस तरह देख रहे थे, जैसे अतिम विदा दे रहे हैं। उनकी आखें कह रही थी—आना जाना तो लगा ही रहता है। आया है सो जाएगा—राजा, रक, फकीर। आदमी को कूच करने के लिए एक निमित्त चाहिए।

इजन सचमुच स्टार्ट हो गया। ऐसा लगा, जसे सारी बस ही इजन है और हम इजन के भीतर बठे हैं। काच बहुत कम बचे थे। जो बचे थे, उनसे हमे बचना था। हम फौरन खिडकी से दूर सरक गए। इजन चल रहा था। हमे लग रहा था कि हमारी सीट के नीचे इजन है।

बस सचमुच चल पडी और हमे लगा कि यह गाधीजी के असहयोग और सविनय अवज्ञा आदोलनो के वक्त अवश्य जवान रही होगी। उसे ट्रेनिंग मिल चुकी थी। हर हिस्सा दूसरे से असहयोग कर रहा था। पूरी बस सविनय अवज्ञा आदोलन के दौर से गुजर रही थी। सीट का बाडी से असहयोग चल रहा था। कभी लगता सीट बॉडी को छोडकर आगे निकल गई है। कभी लगता कि सीट को छोडकर बॉडी आगे भागी जा रही है। आठ दस मील चलने पर सारे भेदभाव मिट गए। यह समझ मे नही आता था कि सीट पर हम बठे हैं या सीट हम पर बठी है।

एकाएक बस रुक गई। मालूम हुआ कि पेट्रोल की टंकी में छेद हो गया है। ड्राइवर ने बाल्टी में पेट्रोल निकालकर उसे बगल में रखा और नली डालकर इंजन में भेजने लगा। अब मैं उम्मीद कर रहा था कि थोड़ी देर बाद बस कम्पनी के हिस्सेदार इंजन को निकालकर गोद में रख लेंगे और उसे नली से पेट्रोल पिलाएंगे, जैसे मां बच्चे के मुंह में दूध की शीशी लगाती है।

बस की रफ्तार अब पन्द्रह-बीस मील हो गई थी। मुझे उसके किसी हिस्से पर भरोसा नहीं था। ब्रेक फेल हो सकता है स्टीयरिंग टूट सकता है। प्रकृति के दृश्य बहुत लुभावन थे। दोनों तरफ हरे हरे पेड़ थे जिन पर पक्षी बैठे थे। मैं हर पेड़ को अपना दुश्मन समझ रहा था। जो भी पेड़ आता, डर लगता कि इससे बस टकराएगी। वह निकल जाता तो दूसरे पेड़ का इन्तजार करता। झील दिखती तो सोचता कि इसमें बस गोता लगा जाएगी।

एकाएक फिर बस रुकी। ड्राइवर ने तरह तरह की तरकीबें कीं, पर वह चली नहीं। सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू हो गया था। कम्पनी के हिस्सेदार कह रहे थे—बस तो फर्स्ट क्लास है जी! ये तो इत्तफाक की बात है।

क्षीण चांदनी में वृक्षों की छाया के नीचे वह बस बड़ी दयनीय लग रही थी। लगता जैसे कोई वृद्धा थककर बैठ गई हो। हमें ग्लानि हो रही थी कि इस बेचारी पर लदकर हम चले आ रहे हैं। अगर इसका प्राणांत हो गया तो इस बियाबान में हमें इसकी अन्त्येष्टि करनी पड़ेगी।

हिस्सेदार साहब ने इंजन खोला और कुछ सुधारा। बस आगे चली। उसकी चाल और कम हो गई थी।

धीरे धीरे वृद्धा की आंखों की ज्योति जाने लगी। चांदनी में रास्ता टटोलकर वह रेंग रही थी। आगे या पीछे से कोई गाड़ी आती दिखती तो वह एकदम किनारे खड़ी हो जाती और कहती—निकल जाओ बेटी! अपनी तो वह उम्र ही नहीं रही।

एक पुलिया के ऊपर पहुंचे ही थे कि एक टायर फिस्स करके बैठ गया। बस बहुत जोर से हिलकर थम गई। अगर स्पीड में होती तो उछलकर नाले में गिर जाती। मैंने उस कम्पनी के हिस्सेदार की तरफ पहली बार श्रद्धा भाव से देखा। वह टायरों की हालत जानते हैं, फिर भी जान हथेली पर लेकर इसी बस से सफर कर रहे हैं। उत्सर्ग की ऐसी भावना दुर्लभ है। सोचा, इस आदमी

के साहस और बलिदान भावना का सही उपयोग नहीं हो रहा है। इसे तो किसी क्रांतिकारी आंदोलन का नेता होना चाहिए। अगर बस नाले मे गिर पडती और हम सब मर जाते, तो देवता बाहें पसारे उसका इंतजार करते। कहते— वह महान आदमी आ रहा है जिसने एक टायर के लिए प्राण दे दिए। मर गया, पर टायर नही बदला।

दूसरा घिसा टायर लगाकर बस फिर चली। अब हमने वक्त पर पन्ना पहुचने की उम्मीद छोड दी थी। पन्ना कभी भी पहुचने की उम्मीद छोड दी थी—पन्ना क्या, कही भी कभी भी पहुचने की उम्मीद छोड दी थी। लगता था, जिन्दगी इसी बस मे गुजारनी है और इससे सीधे उस लोक की ओर प्रयाण कर जाना है। इस पृथ्वी पर उसकी कोई मंजिल नही है। हमारी बेताबी, तनाव खत्म हो गए। हम बड इत्मीनान से घर की तरह बैठ गए। चिन्ता जाती रही। हसी-मजाक चालू हो गया।

ठड बढ रही थी। खिडकिया खुली थी ही। डाक्टर ने कहा—गलती हो गई। 'कुछ' पीने को ले आते तो ठीक रहता।

ठड बढ रही थी। एक गाव पर बस रुकी तो डाक्टर फौरन उतरा। ड्राइवर से बोला—जरा रोकना! नारियल ले आऊ। आगे मढिया पर फोडना है।

डाक्टर झोपडियो के पीछे गया और देशी शराब की बोतल ले आया। छागलो मे भरकर हम लोगो ने पीना शुरू किया।

इसके बाद किसी कष्ट का अनुभव नही हुआ। पन्ना से पहले ही सब मुसाफिर उतर चुके थे। बस-कम्पनी के हिस्सेदार शहर के बाहर ही अपने घर पर उतर गए। बस शहर मे अपने ठिकाने पर रुकी। कम्पनी के दो मालिक रजाइयो में दुबके बैठे थे। रात का एक बजा था। हम पाचो उतरे। मैं सडक के किनारे खडा रहा। डाक्टर भी मेरे पास खडा होकर बोतल से अन्तिम घूट लेने लगा। बाकी तीन मित्र बस मालिको पर झपटे। उनकी गम डाट हम सुन रहे थे। पर वे निराश लौटे। बस मालिको ने कह दिया था—सतना की बस तो चार-पाच घण्टे पहले जा चुकी। अब लौटती होगी। अब तो बस सबेरे ही मिलेगी।

आसपास देखा, सारी दुकानें-होटलें बन्द। ठण्ड कडाके की। भूख भी

खूब लग रही थी। तभी डाक्टर बस मालिकों के पास गया। पांचेक मिनट में उनके साथ लौटा तो बदला हुआ था। बड़े अदब से मुझसे कहने लगा—सर, नाराज मत होइए। सरदारजी कुछ इन्तजाम करेंगे। सर, सर! उन्हें अफसोस है कि आपको तकलीफ हुई।

अभी डाक्टर बेतकल्लुफी से बातें कर रहा था और अब मुझे 'सर' कह रहा है। बात क्या है? कहीं ठर्रा ज्यादा तो असर नहीं कर गया! मैंने कहा—यह तुमने क्या सर सर लगा रखी है?

उसने फिर वैसे ही झुककर कहा—सर, नाराज मत होइए। सर, कुछ इन्तजाम हुआ जाता है।

मुझे तब भी कुछ समझ में नहीं आया। डाक्टर भी परेशान था कि मैं समझ क्यों नहीं रहा हूं। वह मुझे अलग ले गया और समझाया—मैंने इन लोगों से कहा है कि तुम संसद् सदस्य हो। इधर जांच करने आए हो। मैं एक क्लर्क हूं, जिसे साहब ने एम० पी० को सतना पहुंचाने के लिए भेजा है। मैंने इनसे कहा कि सरदारजी, मुझ गरीब की तो गर्दन कटेगी ही, आपकी भी लेवा देई हो जाएगी। वह स्पेशल बस से सतना भेजने का इन्तजाम कर देगा। जरा थोड़ा एम० पी०-पन तो दिखाओ। उल्लू की तरह क्यों पेश आ रहे हो?

मैं समझ गया कि मेरी काली शेरवानी काम आ गई। यह काली शेरवानी और ये बड़े बाल मुझे कई रूप देते हैं। नेता भी दिखता हूं, शायर भी और अगर बाल सूखे बिखरे हों तो जुम्मन शहनाई वाले का भी धोखा हो जाता है।

मैंने मिथ्याचार का आत्मबल बटोरा और लौटा, तो ठीक संसद सदस्य की तरह। आते ही सरदारजी से रोब से पूछा—सरदारजी, आर० टी० ओ० से कब तक इस बस को चलाने का सौदा हो गया है?

सरदारजी घबरा उठे। डाक्टर खुश कि मैंने फर्स्ट क्लास रोल किया है।

रोबदार संसद सदस्य का एक वाक्य काफी है, यह सोचकर मैं दूर खड़े होकर सिगरेट पीने लगा। सरदारजी ने वहीं मेरे लिए कुर्सी बुलवा दी। वह डरे हुए थे और डरा हुआ मैं भी था कि कहीं पूछताछ होने लगी कि मैं कौन संसद् सदस्य हूं तो क्या कहूंगा! याद आया कि अपने मित्र महेशदत्त मिश्र का नाम धारण कर लूंगा। गांधीवादी होने के नाते वह थोड़ा झूठ बोलकर मुझे

बचा ही लेंगे।

अब मेरा आत्मविश्वास बहुत बढ गया। झूठ अगर जम जाए तो सत्य से ज्यादा अभय देता है।

मैं वही बैठे बैठे डाक्टर से चीखकर बोला—बाबू, यहा क्या क्यामत तक बठे रहना पडेगा? इधर कही फोन हो तो जरा कलेक्टर को इत्तला कर दो। वह गाडी का इतजाम कर देंगे।

डाक्टर वही से बोला—सर, बस एक मिनट! जस्ट ए मिनट, सर!

थोडी देर बाद सरदारजी ने एक नई बस निकलवाई। मुझे सादर बठाया। बस चल पडी।

मुझे एम० पी० पन काफी भारी पड रहा था। मैं दोस्तो के बीच अजनबी की तरह अक्डा बैठा था। डाक्टर बार बार 'सर' कहता रहा और बस का मालिक 'हुजूर'।

सतना मे जब रेलवे के मुसाफिरखाने मे पहुचे तब डाक्टर ने कहा—अब तीन घण्टे लगातार तुम मुझे 'सर' कहो। मेरी बहुत तौहीन हो चुकी है।

इस्पेक्टर मातादीन चाद पर

वैज्ञानिक कहते हैं, चांद पर जीवन नहीं है।

सीनियर पुलिस इंस्पेक्टर मातादीन (डिपार्टमेंट में एम० डी० साब) कहते हैं—वज्ञानिक झूठ बोलते हैं, वहा हमारे जसे ही मनुष्य की आबादी है।

विज्ञान ने हमेशा इस्पेक्टर मातादीन से मात खाई है। फिंगर प्रिंट विशेषज्ञ कहता रहता है—छुरे पर पाए गए निशान मुलजिम की अगुलियो के नहीं हैं। पर मातादीन उसे सजा दिला ही देते हैं।

मातादीन कहते हैं ये वैज्ञानिक केस का पूरा इनवेस्टिगेशन नहीं करते। उन्होंने चाद का उजला हिस्सा देखा और कह दिया, वहा जीवन नहीं है। मैं चाद का अधेरा हिस्सा देखकर आया हू। वहा मनुष्य जाति है।

यह बात सही है क्योंकि अधेरे पक्ष के मातादीन माहिर माने जाते हैं।

पूछा जाएगा, इस्पेक्टर मातादीन चाद पर क्यों गए थे? टूरिस्ट की हैसियत से या किसी फरार अपराधी को पकडने? नहीं, वे भारत की तरफ से सांस्कृतिक आदान प्रदान के अतगत गए थे। चाद सरकार ने भारत सरकार को लिखा था—यो हमारी सभ्यता बहुत आगे बढ़ी है। पर हमारी पुलिस मे पर्याप्त सक्षमता नही है। वह अपराधी का पता लगाने और उसे सजा दिलाने में अकसर सफल नही होती। सुना है आपके यहा रामराज है। मेहरबानी करके किसी पुलिस अफसर को भेजें जो हमारी पुलिस को शिक्षित कर दे।

गृहमंत्री ने सचिव से कहा—किसी आई० जी० को भेज दो।

सचिव ने कहा—नहीं सर, आई० जी० नहीं भेजा जा सकता। प्रोटोकॉल का सवाल है। चाद हमारा एक क्षुद्र उपग्रह है। आई० जी० के रैंक के आदमी को नही भेजेंगे। किसी सीनियर इस्पेक्टर को भेज देता हू।

तय किया गया कि हजारों मामलों के इनवेस्टिगेटिंग आफीसर सीनियर इस्पेक्टर मातादीन को भेज दिया जाए।

चाद की सरकार को लिख दिया गया कि आप मातादीन को लेने के लिए पृथ्वी यान भेज दीजिए।

पुलिस मन्त्री ने मातादीन को बुलाकर कहा—तुम भारतीय पुलिस की उज्ज्वल परम्परा के दूत की हैसियत से जा रहे हो। ऐसा काम करना कि सारे अतरिक्ष मे डिपाटमेट की ऐसी जय जयकार हो कि पी०एम० (प्रधान मन्त्री) को भी सुनाई पड जाए।

मातादीन की यात्रा का दिन आ गया। एक यान अतरिक्ष अड्डे पर उतरा। मातादीन सबसे विदा लेकर यान की तरफ बढे। वे धीरे धीरे कहते जा रहे थे, 'प्रविसि नगर कीजै सब काजा, हृदय राखि कौसलपुर राजा।'

यान के पास पहुचकर मातादीन ने मुशी अब्दुल गफूर को पुकारा—'मुशी!'

गफूर ने एडी मिलाकर सल्यूट फटकारा। बोला—जी, पेक्टसा!

एफ० आई०आर० रख दी है!

जी, पेक्टसा।

और रोजनामचे का नमूना?

जी, पेक्टसा!

वे यान मे बैठने लगे। हवलदार बलभद्दर को बुलाकर कहा—हमारे घर मे जचकी के वक्त अपने खटला (पत्नी) को मदद के लिए भेज देना।

बलभद्दर ने कहा—जी, पेक्टसा!

गफूर ने कहा—आप बेफिक्र रहें पेक्टसा! मैं अपने मकान (पत्नी) को भी भेज दूगा खिदमत के लिए।

मातादीन ने यान के चालक से पूछा—ड्राइविंग लाइसेंस है?

जी है साहब!

और गाडी मे बत्ती ठीक है!

जी, ठीक है।

मातादीन ने कहा, सब ठीक-ठाक होना चाहिए, वरना हरामजादे का बीच अतरिक्ष मे, चालान कर दूगा।

चद्रमा से आए चालक ने कहा—हमारे यहा आदमी से इस तरह नही बोलते।

मातादीन ने कहा—जानता हू बे! तुम्हारी पुलिस कमजोर है। अभी मैं उसे ठीक करता हू।

मातादीन यान में कदम रख ही रहे थे कि हवलदार रामसजीवन भागता हुआ आया। बोला—पेक्टसा, एस०पी० साहब के घर में से कहे हैं कि चांद से एड़ी चमकाने का पत्थर लेते आना।

मातादीन खुश हुए। बोले—कह देना बाई साहब से, जरूर लेता आऊंगा।

वे यान में बैठे और यान उड़ चला। पृथ्वी के वायुमंडल से यान बाहर निकला ही था कि मातादीन ने चालक से कहा—अबे, हार्न क्यों नहीं बजाता?

चालक ने जवाब दिया—आसपास लाखों मील में कुछ नहीं है।

मातादीन ने डांटा—मगर रूल इज रूल। हार्न बजाता चल।

चालक अंतरिक्ष में हार्न बजाता हुआ यान को चांद पर उतार लाया। अंतरिक्ष अड्डे पर पुलिस अधिकारी मातादीन के स्वागत के लिए खड़े थे। मातादीन रोब से उतरे और उन अफसरों के कंधों पर नजर डाली। वहां किसीके स्टार नहीं थे। फीते भी किसीके नहीं लगे थे। लिहाजा मातादीन ने एड़ी मिलाना और हाथ उठाना जरूरी नहीं समझा। फिर उन्होंने सोचा, मैं यहां इंस्पेक्टर की हैसियत से नहीं सलाहकार की हैसियत से आया हूं।

मातादीन को वे लोग लाइन में ले गए और एक अच्छे बंगले में उन्हें टिका दिया।

एक दिन आराम करने के बाद मातादीन ने काम शुरू कर दिया। पहले उन्होंने पुलिस लाइन का मुलाहजा किया।

शाम को उन्होंने आई०जी० से कहा—आपके यहां पुलिस लाइन में हनुमानजी का मंदिर नहीं है। हमारे रामराज में पुलिस लाइन में हनुमानजी हैं।

आई० जी० ने कहा—हनुमान कौन थे—हम नहीं जानते।

मातादीन ने कहा—हनुमान का दर्शन हर कर्तव्यपरायण पुलिस वाले के लिए जरूरी है। हनुमान सुग्रीव के यहां स्पेशल ब्रांच में थे। उन्होंने सीता माता का पता लगाया था। 'एबडक्शन' का मामला था—दफा ३६२। हनुमानजी ने रावण को सजा वहीं दे दी। उसकी प्रापर्टी में आग लगा दी। पुलिस को यह अधिकार होना चाहिए कि अपराधी को पकड़ा और वहीं सजा दे दी। अदालत में जाने का झंझट नहीं। मगर यह सिस्टम अभी हमारे रामराज में भी चालू नहीं हुआ। हनुमानजी के काम से भगवान रामचंद्र बहुत खुश हुए।

वे उन्हें अयोध्या ले आए और 'टौन ड्यूटी' में तनात कर दिया। वही हनुमान हमारे आराध्य देव हैं। मैं उनकी फोटो लेता आया हूं। उसपर से मूर्तियाँ बनवाइए और हर पुलिस लाइन में स्थापित करवाइए।

थोड़े ही दिनों में चाँद की हर पुलिस लाइन में हनुमानजी स्थापित हो गए।

मातादीनजी उन कारणों का अध्ययन कर रहे थे जिनसे पुलिस लापरवाह और अलाल हो गई है। वह अपराधों पर ध्यान नहीं देती। कोई कारण नहीं मिल रहा था। एकाएक उनकी बुद्धि में एक चमक आई। उन्होंने मुंशी से कहा—ज़रा तनखा का रजिस्टर बताओ।

तनखा का रजिस्टर देखा, तो सब समझ गए। कारण पकड़ में आ गया।

शाम को उन्होंने पुलिस मन्त्री से कहा, मैं समझ गया कि आपकी पुलिस मुस्तैद क्यों नहीं है। आप इतनी बड़ी तनख्वाहें देते हैं इसीलिए। सिपाही को पाँच सौ, हवलदार को सात सौ, थानेदार को हज़ार—ये क्या मज़ाक है। आखिर पुलिस अपराधी को क्यों पकड़े? हमारे यहाँ सिपाही को सौ और इंस्पेक्टर को दो सौ देते हैं तो वे चौबीस घंटे जुर्म की तलाश करते हैं। आप तनख्वाहें फौरन घटाइए।

पुलिस मन्त्री ने कहा—मगर यह तो अन्याय होगा। अच्छा वेतन नहीं मिलेगा तो वे काम ही क्यों करेंगे?

मातादीन ने कहा—इसमें कोई अन्याय नहीं है। आप देखेंगे कि पहली घटी हुई तनखा मिलते ही आपकी पुलिस की मनोवृत्ति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जाएगा।

पुलिस मन्त्री ने तनख्वाहें घटा दीं और २-३ महीनों में सचमुच बहुत फ़र्क आ गया। पुलिस एकदम मुस्तैद हो गई। सोते से एकदम जाग गई। चारों तरफ नज़र रखने लगी। अपराधियों की दुनिया में घबड़ाहट छा गई। पुलिस मन्त्री ने तमाम थानों के रिकार्ड बुलवाकर देखे। पहले से कई गुने अधिक केस रजिस्टर हुए थे। उन्होंने मातादीन से कहा—मैं आपकी सूझ की तारीफ़ करता हूं। आपने क्रान्ति कर दी। पर यह हुआ किस तरह?

मातादीन ने समझाया—बात बहुत मामूली है। कम तनखा दोगे, तो मुलाज़िम की गुज़र नहीं होगी। सौ रुपयों में सिपाही बच्चों को नहीं पाल

सकता। दो सौ में इंस्पेक्टर ठाठ बाट नहीं मेनटेन कर सकता। उसे ऊपरी आमदनी करनी ही पड़गी। और ऊपरी आमदनी तभी होगी जब वह अपराधी को पकड़ेगा। गरज कि वह अपराधों पर नजर रखेगा। सचेत, कर्त्तव्यपरायण और मुस्तैद हो जाएगा। हमारे रामराज के स्वच्छ और सक्षम प्रशासन का यही रहस्य है।

चन्द्रलोक में इस चमत्कार की खबर फैल गई। लोग मातादीन को देखने आने लगे कि वह आदमी कैसा है जो तनखा कम करके सक्षमता ला देता है। पुलिस के लोग भी खुश थे। वे कहते—गुरु आप इधर न पधारते तो हम सभी कोरी तनखा से ही गुजर करते रहते। सरकार भी खुश थी कि मुनाफे का बजट बननेवाला था।

आधी समस्या हल हो गई। पुलिस अपराधी पकड़ने लगी थी। अब मामले की जांच विधि में सुधार करना रह गया था। अपराधी को पकड़ने के बाद उसे सज़ा दिलाना। मातादीन इंतजार कर रहे थे कि कोई बड़ा केस हो जाए तो नमूने के तौर पर उसका इनवेस्टिगेशन कर बताए।

एक दिन आपसी मारपीट में एक आदमी मारा गया। मातादीन कोतवाली में आकर बैठ गए और बोले—नमूने के लिए इस केस का 'इनवेस्टिगेशन' मैं करता हूं। आप लोग सीखिए। यह कत्ल का केस है। कत्ल के केस में 'एविडेंस' बहुत पक्का होना चाहिए।

कोतवाल ने कहा—पहले कातिल का पता लगाया जाएगा, तभी तो एविडेंस इकट्ठा किया जाएगा।

मातादीन ने कहा—नहीं, उलटे मत चलो। पहले एविडेंस देखो। क्या कहीं खून मिला? किसीके कपड़ों पर या और कहीं?

एक इंस्पेक्टर ने कहा—हां, मारने वाले तो भाग गए थे। मृतक सड़क पर बेहोश पड़ा था। एक भला आदमी वहां रहता है। उसने उठाकर अस्पताल भेजा। उस भले आदमी के कपड़ों पर खून के दाग लग गए हैं।

मातादीन ने कहा—उसे फौरन गिरफ्तार करो।

कोतवाल ने कहा—मगर उसने तो मरते हुए आदमी की मदद की थी।

मातादीन ने कहा—वह सब ठीक है। पर तुम खून के दाग ढूंढ़ने और कहां जाओगे? जो एविडेंस मिल रहा है उसे तो कब्जे में करो।

वह भला आदमी पकड़कर बुलवा लिया गया। उसने कहा—मैंने तो मरते आदमी को अस्पताल भिजवाया था। मेरा क्या कसूर है?

चाँद की पुलिस उसकी बात से एकदम प्रभावित हुई। मातादीन प्रभावित नहीं हुए। सारा पुलिस मुहकमा उत्सुक था कि अब मातादीन क्या तर्क निकालते हैं।

मातादीन ने उससे कहा—पर तुम झगड़े की जगह गए क्यों?

उसने जवाब दिया—मैं झगड़े की जगह नहीं गया। मेरा वहाँ मकान है। झगड़ा मेरे मकान के सामने हुआ।

अब फिर मातादीन की प्रतिभा की परीक्षा थी। सारा मुहकमा उत्सुक देख रहा था।

मातादीन ने कहा—मकान है तो ठीक है। पर मैं पूछता हूँ, झगड़े की जगह जाना ही क्यों?

इस तर्क का कोई जवाब नहीं था। वह बार बार कहता—मैं झगड़े की जगह नहीं गया, मेरा वहीं मकान है।

मातादीन उसे जवाब देते—सो ठीक है, पर झगड़े की जगह जाना ही क्यों? इस तर्क प्रणाली से पुलिस के लोग बहुत प्रभावित हुए।

अब मातादीन जी ने इनवेस्टिगेशन का सिद्धान्त समझाया—

देखो, आदमी मारा गया है, तो यह पक्का है कि किसीने उसे जरूर मारा। कोई कातिल है। किसीको सजा होनी है। सवाल है—किसको सजा होनी है? पुलिस के लिए यह सवाल इतना महत्त्व नहीं रखता जितना यह सवाल कि जुर्म किसपर साबित हो सकता है या किसपर साबित होना चाहिए। कत्ल हुआ है, तो किसी मनुष्य को सजा होगी ही। मारनेवाले को होती है, या बेकसूर को—यह अपने सोचने की बात नहीं है। मनुष्य मनुष्य सब बराबर हैं। सबमें उसी परमात्मा का अंश है। हम भेदभाव नहीं करते। यह पुलिस का मानवतावाद है।

दूसरा सवाल है किसपर जुर्म साबित होना चाहिए। इसका निर्णय इन बातों से होगा—(१) क्या वह आदमी पुलिस के रास्ते में आता है? (२) क्या उसे सजा दिलाने से ऊपर के लोग खुश होंगे?

मातादीन को बताया गया कि वह आदमी भला है, पर पुलिस अन्याय

करे तो विरोध करता है। जहा तक ऊपर के लोगो का सवाल है—वह वर्तमान सरकार की विरोधी राजनीति वाला है।

मातादीन ने टेबिल ठोककर कहा—फस्ट क्लास केस? पक्का एविडेंस और ऊपर का सपोर्ट।

एक इंस्पेक्टर ने कहा—पर हमारे गले यह बात नही उतरती कि एक निरपराध भले आदमी को सजा दिलाई जाए।

मातादीन ने समझाया—देखो, मैं समझा चुका हू कि सबमे उसी ईश्वर का अंश है। सजा इसे हो या कातिल को, फासी पर तो ईश्वर ही चढेगा न! फिर तुम्हें कपडो पर खून मिल रहा है। इसे छोडकर तुम कहा खून ढूढ़ते फिरोगे? तुम तो भरो एफ० आई० आर०।

मातादीनजी ने एफ० आई० आर० भरवा दी। 'बखत जरूरत के लिए' जगह खाली छुडवा दी।

दूसरे दिन पुलिस कोतवाल ने कहा—गुरुदेव, हमारी तो बडी आफत है। तमाम भले आदमी आते हैं और कहते हैं, उस बेचारे बेकसूर को क्यों फसा रहे हो? ऐसा तो चद्रलोक मे कभी नही हुआ। बताइए हम क्या जवाब दें? हम तो बहुत शर्मिन्दा हैं।

मातादीन ने कोतवाल से कहा—घबडाओ मत। शुरू शुरू मे इस काम मे आदमी को शर्म आती है। आगे तुम्हें बेकसूर को छोडने मे शर्म आएगी। हर चीज का जवाब है। अब आपके पास जो आए उससे कह दो, हम जानते हैं वह निर्दोष है, पर हम क्या करें? यह सब ऊपर से हो रहा है।

कोतवाल ने कहा—तब वे एस० पी० के पास जाएगे

मातादीन बोले—एस० पी० भी कह दें कि ऊपर से हो रहा है।

तब वे आई० जी० के पास शिकायत करेंगे।

आई० जी० भी कहें कि सब ऊपर से हो रहा है।

तब वे लोग पुलिस मन्त्री के पास पहुचेंगे।

पुलिस मन्त्री भी कहेंगे—भया, मैं क्या करू। यह ऊपर से हो रहा है।

तो वे प्रधान मन्त्री के पास जाएगे।

तो वे प्रधान मन्त्री के पास जाएगे।

प्रधान मन्त्री भी कहें कि मैं जानता हू, वह निर्दोष है, पर यह ऊपर से

हो रहा है।

कोतवाल ने कहा—तब वे

मातादीन ने कहा—तब क्या ? तब वे किसके पास जाएंगे ? भगवान के पास न ? मगर भगवान से पूछकर कौन लौट सका है ?

कोतवाल चुप रह गया। वह इस महान प्रतिभा से चमत्कृत था।

मातादीन ने कहा—एक मुहावरा 'ऊपर से हो रहा है' हमारे देश में पच्चीस सालों से सरकारों को बचा रहा है। तुम इसे सीख लो।

केस की तयारी होने लगी। मातादीन ने कहा—अब ४ ६ चश्मदीद गवाह लाओ।

कोतवाल—चश्मदीद गवाह कसे मिलेंगे ? जब किसीने उम मारते देखा ही नहीं, तो चश्मदीद गवाह कैसे होगा ?

मातादीन ने सिर ठोक लिया, किन बेवकूफों के बीच फसा दिया गवर्नमेण्ट ने। इन्हें तो ए-बी-सी डी भी नहीं आती।

झल्लाकर कहा—चश्मदीद गवाह किसे कहते हैं, जानते हो ? चश्मदीद गवाह वह नहीं है जो देखे—बल्कि वह है जो कहे कि मैंने देखा।

कोतवाल ने कहा—ऐसा कोई क्यों कहेगा।

मातादीन ने कहा—कहेगा। समझ मे नहीं आता, कैसे डिपार्टमेण्ट चलाते हो ? अरे चश्मदीद गवाहों की लिस्ट पुलिस के पास पहले से रहती है। जहां जरूरत हुई, उन्हें चश्मदीद बना दिया। हमारे यहा ऐसे आदमी हैं, जो साल मे ३ ४ सौ वारदातों के चश्मदीद गवाह होते हैं। हमारी अदालतें भी मान लेती हैं कि इस आदमी मे कोई दैवी शक्ति है जिससे जान लेता है कि अमुक जगह वारदात होनेवाली है और वहा पहले से पहुच जाता है। मैं तुम्हें चश्मदीद गवाह बनाकर देता हू। ८ १० उठाईगीरों को बुलाओ, जो चोरी, मारपीट, गुण्डागर्दी करते हों। जुआ खिलाते हो या शराब उतारते हों।

दूसरे दिन शहर के ८-१० नवरत्न कोतवाली मे हाजिर थे। उन्हें देखकर मातादीन गद्गद हो गए। बहुत दिन हो गए थे ऐसे लोगों को देखे। बडा सूना-सूना लग रहा था।

मातादीन का प्रेम उमड पडा। उसने कहा—तुम लोगों ने उस आदमी को

लाठी से मारते देखा था न ?

वे बोले—नहीं देखा साब ! हम वहां थे ही नहीं।

मातादीन जानते थे, यह पहला मौका है। फिर उन्होंने कहा—वहां नहीं थे, यह मैंने माना। पर लाठी मारते देखा तो था ?

उन लोगों को लगा कि यह पागल आदमी है। तभी ऐसी ऊटपटांग बात कहता है। वे हंसने लगे।

मातादीन ने कहा—हंसो मत, जवाब दो।

वे बोले—जब थे ही नहीं तो कैसे देखा ?

मातादीन ने गुर्राकर देखा। कहा—कैसे देखा, सो बताता हूं। तुम लोग जो काम करते हो—सब इधर दर्ज है। हर एक को कम से कम दस साल जेल में डाला जा सकता है। तुम ये काम आगे भी करना चाहते हो या जेल जाना चाहते हो ?

वे घबड़ाकर बोले—साब, हम जेल नहीं जाना चाहते।

मातादीन ने कहा—ठीक। तो तुमने उस आदमी को लाठी मारते देखा। देखा न ?

वे बोले—देखा साब। वह आदमी घर से निकला और जो लाठी मारना शुरू किया, तो वह बेचारा बेहोश होकर सड़क पर गिर पड़ा।

मातादीन ने कहा—ठीक है। आगे भी ऐसी वारदातें देखोगे ?

वे बोले—साब, जो आप कहेंगे, सो देखेंगे।

कोतवाल इस चमत्कार से थोड़ी देर को बेहोश हो गया। होश आया तो मातादीन के चरणों पर गिर पड़ा।

मातादीन ने कहा—हटो। काम करने दो।

कोतवाल पांवों से लिपट गया। कहने लगा—मैं जीवन भर इन श्रीचरणों में पड़ा रहना चाहता हूं।

मातादीन ने आगे की सारी कार्य प्रणाली तय कर दी। एफ० आई आर० बदलना, बीच में पन्ने डालना, रोजनामचा बदलना, गवाहों को तोड़ना—सब सिखा दिया।

उस आदमी को बीस साल की सजा हो गई।

चांद की पुलिस शिक्षित हो चुकी थी। धड़ाधड़ केस बनने लगे और सजा

होने लगी। चांद की सरकार बहुत खुश थी। पुलिस की ऐसी मुस्तैदी भारत सरकार के सहयोग का नतीजा था। चांद की संसद् ने एक धन्यवाद का प्रस्ताव पास किया।

एक दिन मातादीनजी का सार्वजनिक अभिनंदन किया गया। वे फूलों से लदे खुली जीप पर बैठे थे। आसपास जय-जयकार करते हजारों लोग। वे हाथ जोड़कर अपने गृहमंत्री की स्टाइल में जवाब दे रहे थे।

जिन्दगी में पहली बार ऐसा कर रहे थे इसलिए थोड़ा अटपटा लग रहा था। छब्बीस साल पहले पुलिस में भरती होते वक्त किसने सोचा था कि एक दिन दूसरे लोक में उनका ऐसा अभिनन्दन होगा। वे पछताए—अच्छा होता कि इस मौके के लिए कुरता, टोपी और धोती ले आते।

भारत के पुलिस मंत्री टेलीविजन पर बैठे यह दृश्य देख रहे थे और सोच रहे थे, मेरी सद्भावना-यात्रा के लिए वातावरण बन गया।

कुछ महीने निकल गए।

एक दिन चांद की संसद् का विशेष अधिवेशन बुलाया गया। बहुत तूफान खड़ा हुआ। गुप्त अधिवेशन था, इसलिए रिपोर्ट प्रकाशित नहीं हुई पर संसद् की दीवारों से टकराकर कुछ शब्द बाहर आए।

सदस्य गुस्से से चिल्ला रहे थे—

कोई बीमार बाप का इलाज नहीं करता।

डूबते बच्चों को कोई नहीं बचाता।

जलते मकान की आग कोई नहीं बुझाता।

आदमी जानवर से बदतर हो गया। सरकार फौरन इस्तीफा दे।

दूसरे दिन चांद के प्रधान मंत्री ने मातादीनजी को बुलाया। मातादीन ने देखा—वे एकदम बूढ़े हो गए थे। लगा, ये कई रात सोए नहीं है।

रुआंसे होकर प्रधान मंत्री ने कहा—मातादीनजी, हम आपके और भारत सरकार के बहुत आभारी हैं। अब आप कल देश वापस लौट जाइए।

मातादीन ने कहा—मैं तो 'टर्म' खत्म करके ही जाऊंगा।

प्रधानमंत्री ने कहा—आप बाकी 'टर्म' का वेतन ले जाइए—डबल ले जाइए, तिबल ले जाइए।

मातादीन ने कहा—हमारा सिद्धांत है हमें पैसा नहीं काम प्यारा है।

आखिर चाद के प्रधान मत्री ने भारत के प्रधान मत्री को एक गुप्त पत्र लिखा।

चौथे दिन मातादीनजी को वापस लौटने के लिए अपने आई० जी० का आडर मिल गया।

उन्होने एस० पी० साहब के घर के लिए एड़ी चमकाने का पत्थर यान में रखा और चाद से विदा हो गए।

उन्हें जाते देख पुलिस वाले रो पड़े।

बहुत अरसे तक यह रहस्य बना रहा कि आखिर चाद में ऐसा क्या हो गया कि मातादीनजी को इस तरह एकदम लौटना पड़ा ' चाद के प्रधान मत्री ने भारत के प्रधान मत्री को क्या लिखा था।

एक दिन वह पत्र खुल ही गया। उसमे लिखा था—

इस्पेक्टर मातादीन की सेवाए हमे प्रदान करने के लिए अनेक धन्यवाद। पर अब आप उन्हें फौरन बुला लें। हम भारत को मित्रदेश समझते थे, पर आपने हमारे साथ शत्रुवत व्यवहार किया है। हम भोले लोगों से आपने विश्वासघात किया है।

आपके मातादीनजी ने हमारी पुलिस को जैसा कर दिया है, उसके नतीजे ये हुए हैं

कोई आदमी किसी मरते हुए आदमी के पास नही जाता, इस डर से कि वह कत्ल के मामले में फसा दिया जाएगा। बेटा बीमार बाप की सेवा नहीं करता। वह डरता है, बाप मर गया तो उसपर कहीं हत्या का आरोप नही लगा दिया जाए। घर जलते रहते हैं और कोई बुझाने नहीं जाता—डरता है कि कही उस पर आग लगाने का जुर्म कायम न कर दिया जाए। बच्चे नदी मे डूबते रहते हैं और कोई उन्हें नहीं बचाता, इस डर से कि उसपर बच्चों को डुबाने का आरोप न लग जाए। सारे मानवीय सबध समाप्त हो रहे हैं। मातादीनजी ने हमारी आधी सी सस्कृति नष्ट कर दी है। अगर वे यहां रहे तो पूरी सस्कृति नष्ट कर देंगे। उन्हें फौरन रामराज मे बुला लिया जाए।

साहित्यजीवी की आमदनी जब १५०० रु० महीना हुई तो उसने पहली बार एक लेख मे लिखा—इस देश के लेखक सुविधाभोगी हो गए हैं। वे अपने समाज की समस्याओ से कटे रहते हैं।

साहित्यजीवी जब परीक्षाजीवी, पेपरजीवी और कमेटीजीवी भी हो गया और आमदनी २५०० रु० पर पहुच गई, तब वह साल मे चार बार कहने लगा इस देश के लेखक सुविधाभोगी हो गए हैं।

जब वह पाठ्य पुस्तकजीवी, पुरस्कारजीवी और सम्पादकजीवी भी हो गया और आमदनी ४ हजार पर पहुच गई, तब हर महीने कहने लगा—इस देश के लेखक सुविधाभोगी हो गए हैं। वे समाज की समस्याओ से कटे हुए हैं।

मुझे जैसे छोटे लेखक को लगता कि वे बार बार मुझे धिक्कार रहे हैं। मैं अपने को भी धिक्कारने लगा। धिक्कारते धिक्कारते जब परेशान हो गया, तो सोचा, उन्हीके पास जाऊ और अपने पाप स्वीकार लू।

गर्मी की एक दोपहर मे उनके बगले पर पहुचा। फाटक पर उनके कुत्ते ने मुझे धिक्कारा। उससे क्षमा मागकर भीतर पहुचा।

वे सोफे पर फैले हुए थे। पान चबा रहे थे। मैं बैठ गया।

मेरी तरफ गदन घुमाने के लिए उन्हें पाच मिनट कोशिश करनी पडी। गदन घूम गई, तब उन्होने कहा—इतनी गर्मी मे चले आ रहे हो। काहे से आए? मैंने कहा—साइकिल से।

उन्होने उसास ली। बोले—बड भाग्यवान हो। आज का लेखक बड़ा सुविधाभोगी हो गया है।

थोडी देर बाद उन्होने कहा—जरा मेरा पीकदान उठाओ।

मैंने पीकदान उठाया। वे पीक थूकने ही वाले थे कि मैंने कहा—रुकिए। आपको थूकने मे मेहनत करनी पडगी। ऐसा करिए—अपना पीक मेरे मुह मे डाल दीजिए। मैं आपकी तरफ से थूक दूगा।

उन्होने पीक मेरे मुह मे भर दिया और मैने उसे पीकदान मे थूक दिया।

वे बोले—कुछ ख्याल मत करना। मुझे प॰ रहने की तनख्वाह मिलती है। अगर उठगा तो रिपोट हो जाएगी और पैसा कट जाएगा।

दोपहर जब चढी, तो वे बोले—तुम यही बैठो। गर्मी बढ गई है। मैं दो घटे फ्रिज म लेटूगा।

उन्होने बडा-सा फ्रिज खोला। उसमे उनका बिस्तर लगा हुआ था। वे बिस्तर पर लेट गए। मैं बैठा रहा।

दो घटे बाद वे फ्रिज मे निकले। बोले—हा, अब हाल चाल सुनाओ।

मैंने कहा—कुछ सुनाऊगा तो आपके कानो को तकलीफ होगी।

उन्हाने कहा—हम थोडी तकलीफ उठाने की भी इच्छा रखते हैं। दिन भर मे अगर जरा सी भी तकलीफ नही हुई, तो जीवन नीरस मालूम होता है। मैं सिफ एक कान को तकलीफ दूगा।

उन्होने एक कान बन्द कर लिया।

मैंने कहा—हाल तो खराब है। अभी मैं बलिया की तरफ गया था। भय कर अकाल पडा है। लोग सडको के किनारे मरे पडे हैं। खिलानेवाला तो कोई था नही, लाश को उठानेवाला भी कोई नही है। आप जस ब॰ आदमी एक सख्त वक्तव्य दे दें, तो सरकार कुछ चेते।

उन्होने कहा—मुझे तुम इस मामले मे मत डालो। मगर जो तुमने अकाल के बारे म कहा है, वह फिर से कहो। वह बहुत प्रभावशाली है।

ऐसा कहकर उन्होने टेप रिकाडर चालू कर दिया। मैंने अकाल की दुदशा का वणन खत्म किया ही था कि वे खिलखिलाकर हस पडे। बोले—इस रिकाड को दरख्वास्त के साथ भेज दूगा, तो चेक आ जाएगा। तुम बहुत अच्छी बातें करते हो। कुछ और सुनाओ।

उन्हाने रिकाड चालू कर दिया। मैंने कहा—आध्र में भुखमरी से ग्रस्त एक मा ने अपने चार बच्चो को अपने हाथ से मार डाला और फिर खु॰ मर गई। कैसे त्रास मे जी रहा है इस देश का आदमी!

वे फिर जोर मे हस पड। बोले—इस रिकाड को भी भेज दूंगा और पसे आ जाएगे। कसी है मेरी हसी?

मैंने कहा—बहुत बढ़िया। अंतरात्मा के अतिशय उल्लास से निकली हुई हंसी है।

वे बोले—बहुत अभ्यास करना पड़ा है। जब मेरी तनख्वाह १५०० रु० हुई तभी से इसका अभ्यास कर रहा हूं। पिछली बार वाराणसी में छात्रों पर गोली दागने के समाचार पर मैंने जो हंसी की टिप्पणी दी थी, वह सर्वश्रेष्ठ मानी गई थी और मुझे बहुत रुपये मिले थे।

मैंने पूछा—इस तरह की हंसी से आपको रुपये क्यों मिल जाते हैं? इससे किसका लाभ होता है? कौन रुपये देता है?

उन्होंने कहा—ऐसी हंसी से सत्ताएं रक्षित होती हैं। समझे? सत्ताएं रक्षित होती हैं। तुम हंस सकते हो?

मैंने कहा—मुझसे नहीं बनेगा।

उन्होंने कहा—सुविधाभोगी हो न! हंसने तक की 'रिस्क' नहीं लेना चाहते।

मैंने कहा—अमुक पत्र का सम्पादक ऐसी सामग्री छाप रहा है जिससे साम्प्रदायिक दंगा भड़क सकता है। आप उसे रोकिए न!

उन्होंने कहा—मुझे तुम इस मामले में मत डालो। उस पत्र में मेरे जन्म दिवस पर मेरा पूरे पृष्ठ का रंगीन चित्र आनेवाला है।

उन्होंने अंगड़ाई ली।

बोले—एक काम करो मेरा। पड़ोस के मकान में मेरी रखैल रहती है। जरा उसे बुला लाओ।

मैं उनकी रखैल को बुला लाया।

उन्होंने मुझसे कहा—तुम बैठो। कुछ चिंतन करो। मैं जरा बेडरूम जा रहा हूं।

मैं चिंतन करता रहा।

वे बेडरूम से लौटकर फिर सोफे पर फैल गए।

मैंने कहा—आप कहते हैं, लेखक सुविधाभोगी हो गया है। वे कौन लेखक हैं?

वे बोले—तुम और तुम्हारे जैसे लेखक सुविधाभोगी हो गए हैं। तुम्हें धिक्कार है।

मैंने पूछा—और आप ?

उन्होंने जवाब दिया—हम तो सारी सुविधाओं से वंचित हैं। हमें पैदल चलने की सुविधा नहीं है। कष्ट उठाने की सुविधा नहीं है। दुखी होने की सुविधा नहीं है। ईमान की बात कहने की सुविधा नहीं है। सच बोलने की सुविधा नहीं है। किसीको नाराज करने की सुविधा नहीं है। संघर्ष करने की सुविधा नहीं है। खतरा उठाने की सुविधा नहीं है। अरे, हमें अपना पीक खुद थूकने तक की सुविधा नहीं है। ये सारी सुविधाएं तुम जैसों ने हथिया ली हैं।

मैं सचमुच अपने को अपराधी महसूस करने लगा।

मैंने कहा—आप कहते हैं लेखक समाज की समस्याओं से कटे हुए हैं। वे लेखक कौन हैं ?

जवाब मिला—तुम और तुम्हारे जैसे।

मैंने पूछा—और जुड़े हुए कौन हैं ?

वे बोले—हम। मैं समस्याओं से जुड़ा हुआ हूं।

मैंने पूछा—आप कैसे जुड़े हुए हैं ?

उन्होंने कहा—यह तो तुमने अभी देख लिया। तुमने अकाल की दुर्दशा की बात की, तो मैं फौरन हंसा। कोई देर की मैंने ? कितनी निकटता से जुड़ा हुआ हूं मैं। तुमने उस मां की बात की, तो मैं एकदम हंसा। एक सेकंड की भी देर की ? तुम्हें रोने में कम से कम एक मिनट लग जाता और तुम समस्या से कट जाते। मुझे हंसने में एक सेकंड भी नहीं लगा। समस्या से तुम जुड़े हो कि मैं ?

मैंने स्वीकारा—आप जुड़े हैं।

बैरंग शुभकामना और प्रजातंत्र

नया साल राजनीति वालो के लिए मतपेटिका और मेरे लिए शुभकामना का बरग लिफाफा लेकर आया है। दोनो ही बैरग शुभकामनाए हैं जिन्हें मुझे स्वीकार करने मे १० पैसे लग गए और राजनीतिज्ञो को बहुत बैरग चाज चुकाना पडेगा।

मेरे आसपास 'प्रजातत्र बचाओ' के नारे लग रहे हैं। इतने ज्यादा बचाने वाले खडे हो गए हैं कि अब प्रजातत्र का बचना मुश्किल दिखता है। जनतत्र बचाने के पहले सवाल उठता है—किसके लिए बचाए? जनतत्र बच गया और फालतू पडा रहा, तो किस काम का। बाग की सब्जी को उजाडू ढोरो से बचाते हैं, तो क्या इसलिए कि वह खडी-खडी सूख जाए? नही, बचानेवाला सब्जी पकाकर खाता है। जनतत्र अगर बचेगा तो उसकी सब्जी पकाकर खाई जाएगी। मगर खानेवाले इतने ज्यादा हैं कि जनतत्र के बटवारे मे आगे चलकर झगडा होगा।

पर जनतत्र बचेगा कैसे? कौन सा इजेक्शन कारगर होगा? मैंने एक चुनावमुखी नेता से कहा—भैयाजी, आप तो राजनीति मे मा के पेट से ही हैं। जरा बताइए, जनतत्र कैसे बचेगा? कोई कहते हैं, समाजवाद से जनतत्र बचेगा। कोई कहता हैं, समाजवाद से मर जाएगा। कोई कहता है, गरीबी मिटाए बिना जनतत्र नही बच सकता। तब कोई कहता है, गरीबी मिटान का मतलब तानाशाही लाना। कोई कहता है, इदिरा गाधी के सत्ता मे रहने से जनतत्र बचेगा। पर कोई कहना है—इदिरा ही तो जनतत्र का नाश कर रही है। आप बताइए, जनतत्र कसे बचेगा?

भैयाजी ने कहा—भैया, हम तो सौ बात की एक बात जानते है कि अपने को बचाने से जनतत्र बचेगा। अपने को बचाने से दुनिया बचती है। जरा चलू, टिकट की कोशिश करनी है।

सोचता हू, मैं भी चुनाव लडकर जनतत्र बचा लू। जब जनतत्र की सब्जी पकेगी तब एक प्लेट अपने हिस्से मे भी आ जाएगी। जो कई सालो से जनतत्र

की सब्जी खा रहे हैं, कहते हैं बड़ी स्वादिष्ट होती है। 'जनतंत्र' की सब्जी में जो 'जन' का छिलका चिपका रहता है उसे छील दो और खालिस 'तंत्र' को पका लो। आदर्शों का मसाला और कागजी कायदों का नमक डालो और नौकरशाही की चम्मच से खाओ! बड़ा मजा आता है—कहते हैं खानेवाले।

सोचता हूँ, जब पहलवान चंदगीराम और फिल्मी सितारे सितारिन जनतंत्र को बचाने को आमादा हैं, तो मैं भी क्यों न जनतंत्र को बचा लूँ। मास्टर को तो बादाम पीसने से फुरसत नहीं मिलेगी और सितारों को किसी न किसी के बैकग्राउण्ड म्यूजिक पर होंठ हिलाना पड़ेगा। मेरे बिना जनतंत्र कैसे बचेगा?

पर तभी यह बैरंग लिफाफा दिख जाता है और दिल बैठ जाता है। मैंने ग्रीटिंग कार्डों को बिछाकर देखा है—लगभग ५ वर्गमीटर शुभकामनाएं मुझे नये वर्ष की मिली हैं। अगर इतने कार्ड मुझे कोरे मिल जाते, तो मैं इन्हें बेच लेता। पर इनपर मेरा नाम लिखा है, इसलिए कोई नहीं खरीदेगा। दूसरे के नाम की शुभकामनाएं किस काम की?

इनमें एक बैरंग लिफाफा भी है। कार्ड पर मेरी सुख-समृद्धि की कामना है। सही है। पर इस शुभकामना को लेने के लिए मुझे १० पैसे देने पड़े। जो शुभकामना हाथ में आने के दस पैसे ले ले वह मेरा क्या मंगल करेगी। शुभचिंतक मुझे समृद्ध तो देखना चाहता है पर यह मुझे बतलाने के ही १० पैसे ले लेता है।

शुभ का आरम्भ अकसर मेरे साथ अशुभ हो जाता है। समृद्ध होने के लिए लाटरी की दो टिकटें खरीदीं—हरियाणा और राजस्थान की। खुली तो अपना नम्बर नहीं था। दो रुपये गांठ के चले गए। सोचा, बंसीलाल और सुखाड़िया का एक एक रुपया किसी जन्म का कर्ज होगा! चुक गया। अपने को ऐसे समृद्धि नहीं मिलेगी। वह पगडंडी से आती जाती है। लजीली कुलवती है। पर्दा भी करती है। मेरे एक छात्र ने वह पगडंडी ढूंढ़ ली है। एक दिन मिला तो मैंने पूछा—तुम्हारे ऐसे ठाठ कैसे हो गए? बड़ा पैसा कमा रहे हो। उसने कहा—सर, अब मैं बिजनेस लाइन में आ गया हूँ। मैंने पूछा—कौन सा बिजनेस करते हो? उसने कहा—सट्टा खिलाता हूँ। इस देश में सट्टा बिजनेस लाइन में शामिल हो गया है। मंथन करके लक्ष्मी को निकालने के लिए दानवों को देवों का सहयोग अब नहीं चाहिए। पहले समुद्र मंथन के वक्त तो उन्हें

टेकनीक नहीं आती थी, इसलिए देवताओं का सहयोग लिया। अब वे टेकनीक सीख गए हैं।

हर अच्छी चीज बैरंग हो जाती है। पिछले साल सफाई सप्ताह का उद्‌घाटन मेरे घर के पास ही हुआ था। अच्छी 'साइट' थी। वहां कचरे का एक बड़ा ढेर लगाया गया। फोटोग्राफर कोण और प्रकाश देख गया और तय कर गया कि मंत्रीजी को किस जगह खड़े होकर फावड़ा चलाना है। अफसर कचरे की सजावट करवाने में लग गए। एक दिन मंत्री जी आए और दो चार फावड़े चलाकर सफाई सप्ताह का उदघाटन कर गए। इसके बाद कोई उस कचरे के ढेर को साफ करने नहीं आया। उम्मीद थी कि हर साल यहीं सफाई सप्ताह का उद्‌घाटन होगा और हर साल ४ फावड़े मारने से लगभग एक शताब्दी में यह कचरा साफ हो जाएगा। मैं इंतजार कर सकता हूं पर इस साल दूसरी जगह चुन ली गई।

सफाई सप्ताह कचरे का ढेर दे जाता है और नया साल बैरंग शुभकामना लेकर आता है। फिर भी संसद् में जाने को लालायित हूं। एक साहब से अपनी इच्छा प्रकट करता हूं तो वह कहता है—चुनाव लड़ने से भी क्या होगा? मैंने कहा—संसद् सदस्य हो जाऊंगा।

वह—संसद् सदस्य होने से भी क्या होगा?

मैं—मंत्री हो जाऊंगा।

वह—मंत्री होने से भी क्या होगा?

मैं—मैं प्रधान मंत्री हो जाऊंगा।

वह—प्रधान मंत्री होने से भी क्या होगा?

मैं—मैं गरीबी मिटा दूंगा।

वह—गरीबी मिटाने से भी क्या होगा?

मैं—लोग खुशहाल हो जाएंगे।

वह कहता है—पर भैया, खुशहाल होने से भी क्या होगा?

मेरे पास इसका जवाब नहीं। यह भारतीय जन कैसा हो गया है? कैसा हो गया इसका मन? लगता है मुझे ही नहीं सारे देशवासियों को बैरंग शुभकामनाएं आती रही हैं और आज उसका यह हाल हो गया है कि कहता है—खुशहाल होने से भी क्या होगा?

मित्र कहते हैं—तुम तो जनता के उम्मीदवार हो जाओ। जनसमर्थित उम्मीदवार! पर मैं ऐसी भारतीय जन की तलाश मे हू वर्षों से। वह मिलता नही है। कहते हैं, वह चुनाव के वक्त मिलता है—भारतीय जन। पर अभी के एक चुनाव मे मैं उसे तलाशता रहा। लगभग हर पार्टी ने मुसलमानो के मत पाने के लिए मौलाना को बुलाया। मौलाना ने फतवा दिया—मुसलमानो, जब तुम ईद के चाद के बारे मे मेरी बात मानते हो तो वोट के बारे मे भी मेरी बात मानो। अमुक को वोट दो। जैनियो के मत पाने के लिए कोई आल इण्डिया जैन नेता बुला लिया। दिगम्बरो के लिए दिगम्बर और श्वेताम्बरो के लिए श्वेताम्बर। स्थानकवासी और तेरापथी और मिल जाते तो ठीक रहता। तेलियो के लिए अखिल भारतीय तेली और नाइयो के लिए आल इण्डिया नाई। क्षेत्र के ब्राह्मणो से कहा गया—यहा से हमेशा ब्राह्मण चुनाव जीता है। देख लो, २० सालो का रिकार्ड। धिक्कार है हम ब्राह्मणो को अगर कोई गैर ब्राह्मण जीत गया तो।

कहा है भारतीय जन? कौन-सा है? क्या वह, जो कहता है—खुशहाल होने से भी क्या होगा? या यह जो भारतीय होने के लिए चलता है, कि रास्ते मे कोई उसे रोककर कहता है—चल वापस। तू भारतीय नही, ब्राह्मण है।

बेरंग मगल कार्ड मेरी आखो मे घूरकर देखता है और कहता है—वक्त के इशारे को समझ और बाज आ। तुझसे प्रजातंत्र नही बचेगा। अगर तुझे ही चुनाव जीतकर प्रजातंत्र बचाने का काम नये साल ने सौंपा होता, तो मेरे ऊपर पूरी टिकटें न चिपकती।

इतिहास का सबसे बडा जुआ

(इधर पचम गुरु का मशहूर जुए का अड्डा चलता है। पुलिस, ऊचे अफसरान और धनी मानी लोगो के नैतिक सहयोग से यह अड्डा फल फूल रहा है—याने फूलने की झझट मे न पडकर एकदम फल जाता है। हर जुए के अड्डे मे 'छोकरे' होते हैं, जो पान, बीडी, दारू का इतजाम करते हैं जुआरियो की सेवा करते हैं। पचम गुरु के अड्डे में एक तेज छोकरा है। उसे पूर्व स्मृति है। वह कहता है, द्वापर म भी वह 'छोकरा' ही था और लच्छू उस्ताद के जुए के अड्डे में काम करता था। जब दुर्योधन ने युधिष्ठिर के साथ जुआ खेला था, तब उन्होंने लच्छू उस्ताद से एक अच्छा 'छोकरा' देने के लिए कहा था। लच्छू उस्ताद ने इसी छोकरे को भेज दिया था। वह कहता है, उसने इतिहास का वह सबसे बडा जुआ देखा था। उसीके शब्दो मे—लेखक)

साब, बडे बडे जुए के फड देखे, बडे बडे जुआरी देखे, पर वैसा जुआ नहीं देखा। लच्छू उस्ताद ने कहा था—छोकरे, राजा लोगो का जुआ है। बडे बडे वीर वहा होंगे। अच्छी चाकरी करेगा तो ऊचा 'टिप' मिलेगा। गलती करेगा तो सिर खो देगा। जरा सभल के।

तो साब, मैं तो डरते डरते वहा गया।

मैंने पूछा—छोकरे, यह जुआ हुआ ही क्यो ? तू तो वहा था। तू जानता होगा।

छोकरा बोला—जिसको 'पावर पालिटिक्स' बोलते हैं न साब, वही था ये। सब जुआ खेलते हैं पालिटिक्स मे। नेपोलियन ने खेला था, हिटलर ने खेला था। याहिया खा ने भी खेलकर देख लिया। हिन्दचीन मे अमेरिका इतने सालो से जुआ खेल रहा है। १९६२ मे क्यूबा मे रूस और अमेरिका जुआ खेलनेवाले ही थे कि सभल गए, वरना न पाडव रहते, न कौरव।

मैंने कहा—पर ये कौरव पाडव तो एक ही कुल के थे। भाई ही थे। फिर ऐसा पावर पालिटिक्स क्यो चला ?

छोकरे ने कहा—रूस और चीन क्या एक ही कुल के नही हैं साब ? फिर

भी पावर पालिटिक्स का जुआ चल रहा है। अमेरिका और पश्चिमी जर्मनी भी तो एक ही कुल में हैं, पर उनमे भी डालर और मार्क का जुआ चल रहा है। भाई भाई में जुआ होता है साब। एक मजे की बात बताऊ? शकुनि और दुर्योधन के सिवा सब जुए के खिलाफ थे। धृतराष्ट्र जुए को बुरा समझते थे, भीष्म जुए को नाश का कारण मानते थे, विदुर ने तो सबसे ज्यादा विरोध किया। पर जानते हैं साब, युधिष्ठिर को जुआ खेलने के लिए बुलाने कौन गया? वही महात्मा विदुर। और युधिष्ठिर ने भी कहा कि जुआ बहुत खराब चीज है। पर फिर खेलने भी चले आए। कहने लगे—जब बुलाया है तो जरूर चल कर खेलूंगा। साब, सब जुए के खिलाफ पर सब जुआ खेल रहे हैं।

मैंने पूछा—छोकरे, तू तो बड़ा होशियार मालूम होता है। यह तो बता कि ऐसा हुआ क्यो?

छोकरे ने कहा—साब, जब कुल का सयाना अधा होता है, तब थोड़े थोड़े अधे सब हो जाते हैं। फिर जिसे बुरी बात समझते हैं उसीको करते हैं। अभी देख लो न। दुनिया मे सब लड़ाई को बुरा बोलते हैं। सब शांति की इच्छा रखते हैं, पर सब हथियार बनाते जा रहे हैं।

ये युधिष्ठिर जो थे न, धर्मराज थ। बड़े भले आदमी थे। अच्छा, बुरा, पाप, पुण्य, सब समझते थे। दूसरो को सिखाते थे। पर उन्हें जुआ खेलन का शौक था। बड़े आदमी मे एक न एक खराबी होती ही है, साब। हमारे लल्लू उस्ताद ने उनसे कहा था—महाराज, जुआ खेलने का ही शौक है तो हमारे अड्डे पर आ जाया करो। अरे हारोगे भी तो कितना हारोगे? हजार, पाच हजार, दस हजार सिक्के। वेश बदलकर आ जाया करो। कोई जानेगा नहीं। और महाराज पासा नहीं तीन पत्ती खेलो। आपको पासा फेंकना ही नहीं आता। किसी दिन पासे के जुए मे आप भाइयो की कमाई प्रापर्टी उड़ा दोगे। पर वे माने ही नहीं। आखिर वही हुआ जो हमारे लल्लू उस्ताद ने कहा था।

कौरव बठे हैं। पाण्डवो का इतजार कर रहे हैं। धृतराष्ट्र भी उत्सुक हैं। दिखता नही है तो पूछते हैं—आ गए? कोने मे विदुर खिन्न बठे हैं। भीष्म बेचैन हैं। दुर्योधन और शकुनि उत्तेजित हैं। कर्ण शात और सतुष्ट बैठे हैं।

उधर का हाल यह है कि पाण्डव जानत हैं कि हारेंगे, फिर भी खेलने को चले आ रहे हैं। आगे युधिष्ठिर हैं। पीछे भीम। उसके पीछे अर्जुन, नकुल और

सहदेव। भीम उत्तेजित हैं। बाकी भाई इस तरह तटस्थ भाव से चल रहे हैं कि बड़े भैया जो भी करें ठीक है।

आमने-सामने बैठ गए। मैं पानी पिलाने के बहाने युधिष्ठिर के पास गया और कान मे कहा—धमराज, तीन पत्ती खेलो। पासा मत खेलना। तुम्हें पासा फेंकना नही आता। इसी वक्त शकुनि ने मुझे देख लिया और पुकारा—ए छोकरे, उधर क्या कर रहा है ? वह बीडी का कट्टा उठाकर ला।

दुर्योधन बोलता है—दाव मैं लगाऊगा पर पासे मेरी तरफ से मामा शकुनि फेंकेंगे। भला बताइए, ऐसा भी होता है कि दाव एक लगाए और पासा दूसरा फेंके।

मैंने कहा—होता है रे। पालिटिक्स मे होता है। देखा नही कि दाव याहिया खा ने लगाया और पासे निक्सन तथा माओ ने फेंके—दो शकुनि मामा। और हम अगर युधिष्ठिर जसे बने रहते तो हमारा भी कबाड़ा हो जाता। पर हमने कह दिया कि तेरा शकुनि तो हमारा भी 'रसुनि'। फेंक पासा।

छोकरा बोला—बिलकुल ठीक बात बोले साब आप। युधिष्ठिर भी कह देते कि तुम्हारी तरफ से अगर शकुनि पासे फेंकेंगे तो हमारी तरफ से लच्छू उस्ताद फेंकेंगे। शकुनि किसी का लोहा मानता था तो हमारे लच्छू उस्ताद का। पर युधिष्ठिर के हाथ तो पासा फेंकने को कुलबुला रहे थे न। वे इस शर्त को भी मान गए।

और चालू हो गया साब जुआ।

युधिष्ठिर ने लगा दिए दाव पर सोना और रत्न। फेंके पासे।

फिर शकुनि ने पासे फेंके और चिल्लाया—जीत लिया।

एक बात माननी पडेगी साब—शकुनि था उस्ताद। जैसे चाहता वैसे पासे फेंक लेता था। यह बात तो उडाई हुई है कि वह कपटी था। असल मे वह अच्छा खिलाडी था।

फिर लगा दाव—और लाखो अशर्फी, मनो सोना।

धमराज ने पासे फेंके।

फिर शकुनि ने फेंके और चिल्लाया—जीत लिया।

धर्मराज तो जुए के नशे मे धुत्त हो गए थे। उन्होंने सब प्रापर्टी हाथी,

घोड़े, गायें दाव पर लगा दिए और हार गए।

मैंने कहा —अब बद करो, महाराज।

पर वे बोले—अगला दाव मैं ही जीतूगा।

पर अब दाव पर लगाने को बचा ही क्या था? सिफ आदमी बचे थे।

और वे सेनापतियों और नौकरो को दाव पर लगाने और हारने लगे।

मैंने पूछा—क्यो रे छोकरे, जब आदमी दाव पर लगाने लगे तो किसीने रोका नही?

उसने कहा—रोका साव। पर धर्मराज तो होश में नहीं थे। उधर बेचारे विदुर जरूर बार बार धतराष्ट्र से कहते थे कि लडके को रोको, वरना बड़ा अनिष्ट होगा। पर अधे राजा बेटे के मोह में और अधे हो गए थे।

उधर दु शासन, दुर्योधन और शकुनि वगैरह पाडवो की खिल्ली उडाते थे, उनका अपमान करते थे। इधर भीम क्रोध से कसमसा जाते थे। बाकी पांडव बड़े भाई के लिहाज मे मुह लटकाए बैठे थे।

आदमी दाव पर लगने लगे साब और हारे जाने लगे। दास-दासी सब धमराज हार गए।

पसीना आ रहा था युधिष्ठिर को। मुझे पुकारा—छोकरे, पानी पिला।

मैंने उन्हे पानी पिलाते हुए कहा—महाराज, अब भाइयो को लेकर भाग जाओ।

पर वे कहा माननेवाले।

उन्होने नकुल और सहदेव को दाव पर लगा दिया और हार गए।

शकुनि चिल्लाया—छोकरे, थोडी दारू ला।

अब साब, युधिष्ठिर ने भीम और अर्जुन को दाव पर लगाया और हार गए।

कोई भाई नही बोला साब कि हमारा जुआ क्यो खेलते हो?

अब बचे धमराज।

बोले—इस बार मैंने अपने को दाव पर लगाया।

पासे फेंके।

शकुनि ने फेंके और जीत गया।

खलास हो गया। सब भाई दुर्योधन की प्रापर्टी हो गए साब।

अब ?

शकुनि को खूब चढ़ गई थी साब। नही तो वह वैसी बात नहीं कहता। कहता है—धमराज, अभी द्रोपदी बच गई है। उसे भी दाव पर लगाओ।

सारी सभा मे हाहाकार मच गया। विदुर ने फिर समझाया।

बताइए साब, द्रोपदी तो ज्वाइंट प्रापर्टी थी। अकेले युधिष्ठिर की बीवी तो थी नहीं। पाचों भाइयो की थी। फिर एक भाई उसे दाव पर कैसे लगा सकता है ?

पर लगा दिया। भाई लोग कुछ नही बोले। वह जमाना ही ऐसा था साब। भीष्म के पिता शातनु का दिल एक केवट कन्या पर आ गया था, तो बूढे बाप के शौक के लिए भीष्म ने राजपाट छोडा और क्वांरे रहे। बोले ही नही कि फादर, बहुत भोग कर लिया, बूढे हो गए। अब हमारी जिंदगी क्यो खराब करते हो ?

तो साब, युधिष्ठिर द्रोपदी को भी हार गए।

भीम अब आपे से बाहर हो गया। बोला—अभी तक मैं कुछ नहीं बोला। तुम प्रापर्टी हार गए। हमे भी हार गए। पर तुमने द्रोपदी को भी दाव पर लगा दिया। तुम पक्के जुआरी हो। मैं तुम्हारे इन पासे फेंकने वाले हाथो को जला दूंगा।

एक बात बताऊ ? भीम द्रोपदी को बहुत 'लव' करता था। पर द्रोपदी जरा अर्जुन की तरफ ज्यादा थी। कृष्ण अर्जुन का बड़ा दोस्त था। और द्रोपदी भी कृष्ण से अपना दुख कहती थी। पता नहीं क्या गोलमाल था साब। ये कृष्ण था बहुत ददी फदी आदमी। वह होता तो शकुनि की नहीं चलती। वह साफ झूठ बोल जाता था और कहता था कि यही सच है। वह कपट कर लेता था और कहता था कि इस वक्त कपट करना धम है।

अब साब, द्रोपदी सभा में लाई गई। दुशासन लाया। और उसका अप मान होने लगा।

बडी जोरदार औरत थी यह द्रोपदी। उसने वह धिक्कारा सबको कि सबके माथे झुक गए। बोली—ये मेरे पति कायर हैं। ये इतने बूढे और ज्ञानी सभा में बठे हैं, ये सब पापी हैं। मुझे बताओ कि खुद अपने को हारे हुए युधिष्ठिर क्या मुझे दाव पर लगा सकते हैं? क्या बोलता है तुम्हारा धम ? तुम्हारी

नीति ? तुम्हारा न्याय ?

सब सुट्ट हो गए साब ! कोई नहीं बोला ।

मैंने कहा—छोकरे, कौरवों की तरफ बड़े-बड़े लोग थे। बड़-बूढ़े थे। वे सही बात क्यों नहीं बोले।

छोकरा हँसा। बोला—साब, वे सब 'सिंडिकेटी' हो गए थे। अनुशासन में बंध गए थे। निजलिंगप्पा जी जिसको 'डिसिप्लिन' बोले थे न, वही हो गया था। अंतरात्मा की आवाज और अनुशासन का झगड़ा था। द्रौपदी कहती थी—तुम्हारी अंतरात्मा क्या बोलती है ? पर वे सब बूढ़े और पानी जसे जवाब में कह रहे हो—अंतरात्मा की आवाज नहीं। हम तो अनुशासन वाले हैं। इस लिए चुप हैं। और साब, आप जानते ही हैं, कि जैसी सिंडीकेटी अनुशासन वालों की गत हुई वैसी ही इन द्वापर के सिंडिकेटियों की महाभारत में हुई।

मैंने पूछा—छोकरे, फिर पाण्डवों ने क्या किया ?

वह बोला—फिर पाण्डवों ने कुछ नहीं, द्रौपदी ने ही किया। उसने धृत राष्ट्र को खुश करके अपने पतियों और प्रापर्टी को वापस ले लिया। यह दूसरा जुआ था साब ! द्रौपदी ने वह पासे फेंके, क्रोध, धिक्कार और विलाप के, कि वह जीत गई।

अब पाण्डव वापस घर को चले।

इधर दुर्योधन घबड़ाया कि अब ये बदला लेंगे। उसने शकुनि से सलाह की।

वह दौड़कर युधिष्ठिर के पास गया और कहा—एक बार और खेल लो।

और साब, धमराज जानते हुए भी कि फिर हारेंगे, खेलने के लिए लौट आए।

बड़े बौड़म थे ये धमराज।

आगे का हाल तो आप जानते ही हैं। एक ही दाव में पाण्डवों को १२ वर्ष का वनवास और एक वर्ष का अज्ञातवास हो गया।

दुर्योधन का पालिटिक्स चल गया साब। १३ साल तक राजनैतिक विरोधी को बियाबान में रखकर उसने अपनी 'पोजीशन' मजबूत करने की ठान ली थी।

लडका चुप हो गया। उदास हो गया।

कहने लगा—ऐसा जुआ कभी नही देखा साब! मुझे तो रोना आ गया साब, जब पाण्डव वनवासियो का वेश धारण करके चल दिए। भीम लाल-पीले हो रहे थे, पर विवश थे। और बेचारी द्रोपदी बिलखती हुई पीछे चल रही थी।

रास्ते मे लच्छू उस्ताद युधिष्ठिर को मिले। बोले—धमराज, १३ साल का चास मिला है। इसमे कम से कम एक भाई को तो अच्छा जुआरी बनाओ। तीर कमान सिखाने से ही कुछ नही होता। तीर कमान को तो पासो ने मार दिया। पाचो पाण्डवो मे कम से कम एक को तो जुआ खेलने मे एक्सपट होना चाहिए। बोलो, अपने अड्डे के घसीटे को साथ कर दू। वह सिखा देगा।

पर धमराज ने यह बात भी नहीं मानी और वन को चले गए।

आना और न आना रामकुमार का

बदनामी अपनी कई तरह की है। एक यही है कि भाषण देने के, उद्घाटन करने के और मुख्य अतिथि होने के भी पैसे ले लेता हूं।

मगर बदनामी इससे भी आगे बढ़ गई है, यह मुझे उस दिन मालूम हुआ। मैं शहर एक व्यक्तिगत काम से गया था। दूसरे दिन शाम को स्थानीय कालेज के दो-तीन लड़के अपने अध्यापक के साथ आए। मैं खुद परेशान था कि इस शहर मे कोई कालेज वालेज या कोई सस्था है या नही ? है तो कोई आता क्यो नही ? छत्तीस घटे किसी छोटे शहर मे लेखक को पड़े हो जाए और कोई न आए, तो जी न जाने कैसा-कैसा करता है। खैर, वे आए तो तबीयत हरी हो गई। उन्होने कहा—कल हम लोग कालेज में आपका सम्मान करना चाहते हैं।

मैं झूठे सकोच नही पालता। मैंने कहा—कर डालो। शुभ काम है। कितने बजे आ जाऊ ?

वे बोले—चार बजे प्रोग्राम रखा है। हम आपको लेने आ जाएगे।

मैंने कहा—ठीक है। मैं तैयार रहूगा।

बात खत्म होनी चाहिए थी। अब आगे कालेज के बारे मे या मौसम के बारे मे या साहित्य के बारे मे बातें ही हो सकती थी। पर वे गुमसुम बैठे थे।

आखिर एक लड़के ने निहायत भोलेपन से कहा—कितना रुपया लेंगे ?

मैं काफी बेहया हू। मगर इस बात ने मेरी भी चमड़ी उधेड़ दी। बदनामी इतनी आगे बढ़ गई है कि सम्मान करनेवाला जानता है कि यह नीच सम्मान करवाने के भी रुपये लेगा। कैसा बेशर्म है।

यह सही है कि किसी समारोह मे जाना स्वीकार करते वक्त ही 'पत्र पुष्प' कहने वाली रकम का एक अदाज दोनो पार्टियो को रहता है।

मैं पहुचते ही आयोजको के चेहरों, व्यवहार और आवभगत से हिसाब लगाना शुरू कर देना कि ये हू अच्छे पैसे देंगे या नहीं ? कभी ऐसा भी हुआ

है कि ज्यादा आवभगत करने वालो ने रुपये मुझे कम दिए हैं। लेखक का शकालु मन है। शका न हो तो लेखक कैसा ? मगर ये भी लेखक हैं जिनके मन मे न शका उठती है, न सवाल। ज्यादा आवभगत होने लगे तो आशका होती है कि ये पैसे कम देंगे। मैं मन ही मन कहता हू—भैया ज्यादा कर रहे हो। नामल हो जाओ तो मैं भी हो जाऊ। तुम्हारी आवभगत के हिसाब से मेरी घबराहट भी बढ रही है।

समारोह के बाद एक लिफाफा दिया जाता है। इस लिफाफे से मुझे सख्त चिढ है। हर लिफाफे से मुझे चिढ़ है। लिफाफा हमेशा अपने और दूसरे को धोखा देने के काम आता है। लिफाफा देखकर मैं बेचैन हो उठता हू। पता नही कितने हैं ? हैं भी कि नही ? चारो तरफ अधकार। कोई रोशनी देने वाला नही। मैं विरागी की तरह लिफाफा लेकर जेब मे रख लेता हू। जैसे तुच्छ माया है। पर मन बेचन रहता है। मैं बातें करते करते हाथ जेब मे डालकर नोटो को टटोलकर रकम का अन्दाज लगा लेता हू। यह अभ्यास मुझे हो गया है। अगर इसमे नाकामयाब हुआ तो बाथरूम तो कही गया नही है। मैं बाथरूम मे जाकर गिन लेता हू।

रकम की अनिश्चितता की बेचैनी सबको होती है। जिन्हे नही होती वे आदमी नही है। और हैं भी तो झूठे हैं। बहुतो मे बाथ म मे घुसकर गिनने का नतिक साहस नहीं होता और वे अशात मन लेकर औपचारिक सद्भावना और सन्तोष निभाते रहते हैं।

मैं ऐसा नही करता। गिनकर निकालता हू। और रकम सतोषप्रद होती है तो उन लोगो से कहता हू—आपका यह इलाका बहुत प्रगतिशील है! मैं बहुत जगह घूमा हू, पर ऐसा आगे बढा हुआ क्षेत्र मुझे कम ही मिला है।

पर अगर रुपये कम हुए तो कहता हू—यह इलाका पिछडा हुआ है। इसे अभी बहुत प्रगति करनी है।

दस-पन्द्रह रुपये के हेरफेर मे पूरे इलाके को प्रगतिशील या पिछडा हुआ घोषित कर देता हू।

समारोह खत्म हो गया था। मुझे पहली गाडी से ही लौटना था। सामान बध चुका था। होटल के मेरे कमरे मे स्थानीय प्रबुद्ध जन और बधु बठे थे और मेरे भाषण की तारीफ कर रहे थे। मुझे तारीफ बिलकुल अच्छी नही

लग रही थी। मैं बार-बार दरवाजे की तरफ देखता था—रामकुमार अभी तक नहीं आए।

रामकुमार वे सज्जन थ जिनके पास मेरे पैसे थे।

मैंने उन लोगो से कहा—रामकुमार अभी तक नही आए।

वे बोले—आते होंगे।

एक अध्यापक कहते हैं—सोचने की नई दिशा देत हैं आप।

दिशा ? दिशा तो सही वह है जिससे रामकुमार को आना है। नहीं बताना मुझे दिशा, और सोचने की भी कोई खास जरूरत नही है। मुझे तो यह बताओ कि रामकुमार अब तक क्यो नहीं आए।

वे बधु कहते हैं—एक कप चाय हो जाए।

चाय आती है। मुझे अच्छी नही लगती। रामकुमार ने मेरा स्वाद छीन लिया। एक-दो घूट लेता हू और फिर कहता हू—रामकुमार नही आए।

वे नहीं जानत कि मैं बार बार रामकुमार को क्यो पूछता हू।

अब मैं अपने को धिक्कारता हू—लोभी! तू भी कोई लेखक है? लेखक क्या ऐसा होता है? धिक्कार है!

थोडी देर इस धिक्कार से मन को सभालता हू पर फिर पूछ उठता हू—रामकुमार नही आए?

अब उन लोगो को अच्छा नही लग रहा है। वे शायद सोचते हैं कि कुछ घटो मे ही इन्हें रामकुमार इतने पसद आ गए और हम कुछ नहीं।

एक सुन्दरी आती है। कहती है—बडा सुन्दर भाषण था आपका। मुझे ऊष्मा का अनुभव नही होता। इस वक्त विश्व सुन्दरी भी रामकुमार से घटिया है। सुन्दरी मेरी 'हू हां' से निरुत्साहित होती है। पर देखो, मैं क्या करू? रामकुमार तो नहीं आए! अगर वे आ गए होते तो मैं तुम से बडे रस से बातें करता।

मैं मन को फिर सभालने की कोशिश करता हू—बेवकूफ, इतना परेशान क्यो होता है? पसा ही तो सब कुछ नही है। दो हजार लडकों ने तुम्हारा भाषण सुना। इनमे से अगर ५० भी बिगड गए तो जीवन सार्थक हो गया। जब तुम बोल रहे थे तब तुम उन लडको से चाहे तो तुडवा सकते थे—परम्परा से लेकर भाग्य विधाताओं के हाथ-पाव तक।

मेरा मन थोड़ा ऊंचा उठता है। मगर एक मिनट में ही फिर गिरता है और मैं कहता हूं—रामकुमार अभी तक नहीं आए।

उनमें एक बुजुर्ग अध्यापक मेरी बेचनी समझ गए। उन्होंने अलग ले जाकर कान में कहा—रामकुमार शायद सीधे स्टेशन पैसे लेकर पहुंचे। चिंता मत करिए। अगर न भी आए तो हम भिजवा देंगे।

इन्होंने ऐसा क्यों कहा? जरूर पहले से मुझे चरका देने की योजना बन चुकी है। मुझे याद आया लखनऊ का वह वाकया। तीन प्रोफेसर लोग मुझे आगरा की गाड़ी में बिठाने आए। मैं समझा ये रुपये लाए होंगे। पर वे कहने लगे कि हम समझे प्रिंसिपल साहब ने आपको दे दिए होंगे। आगरा की गाड़ी सामने खड़ी थी और मेरे पास किराए के पैसे भी नहीं थे। तब उन अध्यापकों ने चंदा करके मेरे लिए टिकिट खरीदा। पैसे मेरे आज तक नहीं आए।

मैं ज्यादा बेचैन हो गया।

गाड़ी का वक्त हो गया। उन लोगों ने डिब्बे में मेरा सामान रखवाया। बैठते बैठते मैंने फिर दोनों सड़कों पर नजर दौड़ाई और कहा—रामकुमार अभी तक नहीं आए।

स्टेशन पर दूर दूर तक रामकुमार कहीं नहीं हैं।

मेरी घबराहट बढ़ती है।

मैं कहता हूं—रामकुमार तो नहीं आए।

वे अब जवाब नहीं देते। परेशान हो गए हैं।

हम प्लेटफार्म पर चहलकदमी करते हैं। वे लोग साहित्य और राजनीति की बातें करते हैं। मेरा मन नहीं लगता। मेरे मन में रामकुमार की छवि समाई है।

दूसरे प्लेटफार्म पर एक गाड़ी रवाना होने को तैयार खड़ी है। तभी एक औरत सिर पर पोटली रखे भागती आती है और उसका पीछा एक साधु कर रहा है। औरत एक डिब्बे में घुस जाती है। साधु उसे बाहर घसीटकर प्लेटफार्म पर डाल देता है। औरत चीखती है—मैं तेरे साथ नहीं रहूंगी। साधु उसे एक लात मारकर कहता है—रहेगी कैसे नहीं। हंगामा मच जाता है। पुलिस वाला आता है। साधु को डराता है तो साधु कहता है—यह मेरी घरवाली है। मैं इसे ले जाऊंगा।

मेरे पास के डिब्बे मे बैठी एक स्त्री दूसरी से कहती है—बाई, जब इन्द्री पे बस नही है तो साधु क्यो होते हैं ?

बढ़िया प्लाट है कहानी का। पकड लू इसे। डायलाग दिमाग मे जमा लू।

पर मेरा दिमाग प्लाट म भी नही लगता।

थोडी देर बाद फिर कह उठता हू—रामकुमार नहीं आए।

गाडी आधा घटा लेट है।

अब मेरे मन को थोडी राहत मिलती है। रामकुमार के आने की उम्मीद मैं छोडता नही हू। उन्हें आधा घटे का समय और मिल गया है।

मैं प्लेटफाम पर दोनो तरफ देखता हुआ उन लोगो के साथ घूम रहा हू वे ज्ञान चर्चा करते हैं। हसी मजाक करते हैं। मेरा किसी मे मन नही लगता।

इतने मे रामकुमार आते दिखाई देते हैं। वे लोग एक साथ कहते हैं—लीजिए, आ गए आपके रामकुमार।

रामकुमार पसीने से लथपथ हैं। कहते हैं साइकिल पचर हो गई थी। उसे सुधरने देकर लाइन लाइन भागता हुआ आया हू।

मेरी बेचनी कम होती है। मगर ये रामकुमार जेब मे हाथ क्यो नही डालते ? लिफाफा क्यो नही निकालते ? गपशप म क्यो उलझे हैं ?

मैं इ तजार कर रहा हू, यह कब जेब में हाथ डालते हैं।

वे जेब मे हाथ नही डालते।

तरकीबें मुझे बहुत आती हैं। मैं अपनी जेब मे हाथ डालते हुए कहता हू—रामकुमारजी, टिकिट ले लीजिए।

रामकुमार मुझे रोकते हैं—नही, नही, मैं टिकिट ले आता हू।

रामकुमार मुझे अलग ले जाकर लिफाफा देते हैं। कहते हैं—इतने रुपये हैं। ठीक है न।

अब बाथरूम मे जाने की जरूरत नहीं। रामकुमार ने स्वय राशि बत दी है।

टिकिट आ जाता है। मैं कहता हू—भई, चाय पी जाएगी।

चाय मुझे बहुत अच्छी लगती है।

कहता हू—यहा के लोग काफी प्रबुद्ध हैं। मैं देख रहा था, वे लोग ध्यान से मेरी बातें सुन रहे थे और समझ रहे थे। कई जगह तो मैंने अनुभ

किया है कि मैं बोल रहा हू और कोई समझ नही रहा है। इस मामले मे आपका यह क्षेत्र काफी आगे बढा हुआ है।

रामकुमार आ गए थे न !

दिशा बताइए

समारोह के मुख्य अतिथि नही आए थे। वादा करके जो मुख्य अतिथि ऐन मौके पर न आए वह आम आ जानेवाले मुख्य अतिथि से बड़ा होता है, जैसे वह कवि बड़ा होता है जो पेशगी खा जाए और कवि-सम्मेलन में न जाए। एक कवि को जानता हू जो हर शहर का पेशगी खा गए और अब उन्हें कोई नही बुलाता। वे कवि-कर्म से ही छुट्टी पा गए हैं।

संयोजक घबड़ाए हुए हाल मे चारो तरफ नजरें डाल रहे थे। उनकी तलाश दुहरी थी—अपने मुख्य अतिथि को वे खोज रहे थे और साथ ही उसकी एवज मे मुख्य अतिथि बन सकनेवाले को भी ढूढ रहे थे। मुख्य अतिथि की एक बनावट होती है। गाधीजी ने खादी का धोती कुरता पहनाकर और नेहरू ने जाकिट पहनाकर कई पीढियो के लिए मुख्य अतिथि की बनावट तय कर दी थी। आजादी के पहले ये सब दुबले थे, इसलिए मुख्य अतिथि नही होते थे। आजादी के बाद ये मोटे हो गए, कुछ की तोद निकल आई और आदर्श मुख्य अतिथि बन गए। मैं इधर कुछ सालो से देख रहा हू, मैं फुर्ती से मुख्य अतिथि के रूप मे ढल रहा हू। कुरता पायजामा, जाकिट मैं पहले से ही पहनता हू। इधर कपडा ज्यादा लगने लगा है। ज्यो ज्यो कपडा ज्यादा लगने लगा है, त्यो त्यो मैं मुख्य अतिथि की गद्दी की तरफ सरक रहा हू।

कोने मे रखी फूल मालाओ की आखें निकल आई हैं। वे अपने मुख्य अतिथि की तलाश कर रही हैं। मैं फूल मालाओ से आखें मिला रहा हू। बड़ा 'फ्रस्ट्रेशन' है उनकी आखों मे बड़ी निराशा। वादा करके भी प्रेमी काफी हाउस मे न मिले तो उस मन स्थिति मे सुन्दरी को पटा लेना सहज होता है। मैं देख रहा हू, मालाए मुझसे आखें मिला रही हैं। इधर संयोजको की नजर मुझपर बार बार पड़ती है और वे आपस में कानाफूसी करते हैं। वे एवज के मुख्य अतिथि के रूप में मुझे तोल रहे हैं। एवज में छोटो का भाग्य चमक जाता है। राम की एवज में खड़ाऊ रामसिंहासन पर बैठ गई थी।

तीन संयोजक दरवाजे के पास खड़े सलाह कर रहे हैं। वे मेरी तरफ बार

नन के लिए ही बनी हो। गदन और माला बिलकुल मेढ फार ईंच अदर' रहती हैं। माला लपककर गले म फिट हो जाती है। फूल की मार विकट होती है। कई गदनें, जो सघप मे कटने के लिए पुष्ट की गई थीं, माला पहनकर लचीली हो गई हैं। एक क्रातिकारी इधर रहत हैं जिनकी कभी तनी हुई गर्दन थी। मगर उन्हें माला पहनने की लत लग गई। अब उनकी गदन छूने से लगता है, भीतर पानी भरा है। पहले जन-आदोलन मे मुख्य अतिथि होते थे, अब मीना बाजार म मुख्य अतिथि हात हैं।

मैंने दस बारह मालाए पहनी और मेरी सारी उद्दतता चली गई। फूल की मार बुरी होती है। शेर को अगर किसी तरह एक फूलमाला पहना दो तो गोली चलाने की जरूरत नही है। वह फौरन हाथ जोडकर कहेगा—मेरे योग्य कोई और सेवा!

मत्री माइक पर कहता है—अब परसाईजी हमे दिशा निर्देश करेंगे। यह तरुणो की सस्था है। मैं इन्हें क्या दिशा बताऊ? हर दिशा में यहा दिशा शूल हैं। कभी सोचा था कि तकनीकी शिक्षा की दिशा मे जाना चाहिए। मगर हजारो बेकार इजीनियर हैं। उस दिशा म भी दिशा शूल निकला।

क्या दिशा बताऊ? ये तरुण मुझ जसे के गले मे यहा माला पहना रहे हैं और इन्हीकी उम्र के बगाल के तरुण मुझ जसे की गदन काट रह हैं। कौन सी सही दिशा है? माला पहनाने की, या गला काटने की?

किसीको दिशा नही मालूम। दिशा पाने के लिए यहा की राजनैतिक पार्टिया एक अधिवेशन उत्तर मे श्रीनगर मे करती हैं, दूसरा दक्षिण मे त्रिवेंद्रम मे, तीसरा पूव में पटना मे और चौथा पश्चिम मे जोधपुर मे—मगर चारो तरफ घूमकर भी जहा की तहा रहती हैं। बायें जाते जाते लौटकर दायें चलने लगती हैं।

दिशा मुझे मालूम ही नहीं है। कई साल पहले मैं नये लेखक के रूप मे दिशा खोज रहा था। तभी दूसरो ने कहा—बेवकूफ, जो दिशा पा लेता है, वह घटिया लेखक होता है। सही लेखक दिशाहीन होता है। ऊचा लेखक वह जो नही जानता कि कहा जाना है पर चला जा रहा है।

दिशा मैंने छोड दी। देख रहा हू लेखक चौराहे से चारो सडका पर जाते है। मगर दूर नहीं जात। लौट लौटकर चौराहे पर आ जाते हैं और इतजार

करते हैं कि उन्हें उठा ले जानेवाली कार कब आती है और वे बैठकर बाकी लेखकों को 'टा टा' बोलकर चले जाते है। सुना है, बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली मे तो हवाई जहाज से उडा ले जाते हैं। मैं दिशा की खोज मे जूते घिसता रहा और चौराहे का ध्यान नही रखा। देर से चौराहे पर लौटता हू, देखता हू, साथ के लोगो को उठा लिया गया है।

नहीं, दिशा मैं नही बता सकता। फूल मालओ से लाद दो तब भी नहीं। दिशा आज सिर्फ अधा बता सकता है। अधे दिशा बता भी रहे है। सवेरे युवको को दिशा बताएगे, शाम को वृद्धो को। कल डाक्टरो को दिशा बताएगे, तो परसो पाकिटमारो को। अधा दिशा-भेद नही कर सकता, इसलिए सही दिशा दिखा सकता है।

मैंने श्रोताओ से कहा—मैं दिशा नही जानता। फिर मैं बहुत दयालु और शरीफ मुख्य अतिथि हू। आपको बिलकुल तकलीफ नही दूगा। मैं भाषण नही दूगा।

श्रोताओ ने लम्बा भाषण सुनने के लिए सारी शक्ति बटोर ली थी। साप दिखे तो आदमी उससे बचने के लिए स्नायुओ को तीव्र कर लेता है, मास पेशिया मजबूत हो जाती है। मगर फिर यह समझ मे आया कि रस्सी है, तो राहत तो मिलती है, पर साथ ही एक तरह की शिथिलता और गिरावट भी आती है। मेरे श्रोताओ का यही हाल था जिसे साप समझे थे वह रस्सी निकला।

बाद मे सयोजको ने कहा—आपने भाषण क्यो नही दिया? मैंने कहा—वे श्रोता मेरे नही थे। तुम्हारे उन मुख्य अतिथि के थे। मैं दूसरे का मारा हुआ शिकार नही खाता।

चुनाव के नतीजे घोषित हो गए। अब मातमपुर्सी का काम ही रह गया है। इतने बड़े बड़े हार हैं कि मुझ जसे की हिम्मत मातमपुर्सी की भी नहीं होती। मैंने एक बड़े की हार पर दुःख प्रकट करते हुए चिट्ठी लिखी थी। जवाब में उनके सचिव ने लिखा—तुम्हारी इतनी जुरत कि साहब की हार पर दुखी होओ! साहब का कहना है कि उनकी हार पर दुख मनाना उनका अपमान है। वे क्या इसलिए हारे हैं कि तुम जैसे टुच्चे आदमी दुखी हों? बड़े की हार पर छोटे आदमी को दुखी होने का कोई हक नहीं। साहब आगे भी हारेंगे। पर तुम्हें चेतावनी दी जाती है कि अगर तुम दुखी हुए, तो तुमपर मानहानि का मुकदमा दायर किया जाएगा।

बड़ी अजब स्थिति है। दुखी होना चाहता हूं, पर दुखी होने का मुझे अधिकार ही नहीं है। मुझे लगता है, समाजवाद इसीको कहते हैं, कि बड़े की हार पर बड़ा दुखी हो और छोटे की हार पर छोटा। हार के मामले में वर्ग संघर्ष खत्म हो गया।

मैं अब किसीकी हार पर दुःख की चिट्ठी नहीं लिखूंगा। पर जो आस पास ही हारे बैठे हैं, उनके प्रति तो कर्त्तव्य निभाना ही पड़ेगा। चिट्ठी में मातमपुर्सी करना आसान है, मैं हंसते हंसते भी दुःख प्रकट कर सकता हूं। पर प्रत्यक्ष मातमपुर्सी कठिन काम है। मुझे उनकी हार पर हंसी आ रही है, पर जब वे सामने पड़ जाएं तो मुझे चेहरा ऐसा बना लेना चाहिए जैसे उनकी हार नहीं हुई मेरे पिता की सुबह ही मृत्यु हुई है। इतना अपने से नहीं सधता प्रत्यक्ष मातमपुर्सी में मैं हमेशा फेल हुआ हूं। मगर देखता हूं, कुछ लोग मातमपुर्सी करके खुश होते हैं। लगता है भगवान ने इन्हें मातमपुर्सी ड्यूटी करने के लिए ही संसार में भेजा है। किसीकी मौत की खबर सुनते ही वे खुश हो जाते हैं। दुःख का मेकअप करके फौरन उस परिवार में पहुंच जाते हैं। कहते हैं—जिसकी आ गई, वह तो जाएगा ही उनकी इतनी ही उम्र थी। बड़े पुण्यात्मा थे। किसीका दिल नहीं दुखाया (हालांकि उन्होंने कई लोगों की

जमीन बेदखल कराई थी।) उन्हें किसीके कुत्ते ने काट लिया हो और वह कुत्ता आगे मर जाय तो भी वे उसी शान से मातमपुर्सी करेंगे—बडा सुशील कुत्ता था। बडी सात्विक वृत्ति का। कभी किसीको तग नही किया। उसके रिक्त स्थान की पूर्ति श्वान जगत् मे नही हो सकती।

मैं कभी चुनाव नही लडा। एक बार सवसम्मति से अध्यापक सघ का अध्यक्ष हो गया था। एक साल मे मैंने तीन सस्थाओ मे हडताल और दो अध्यापको से भूख-हडताल करवाई। नतीजा यह हुआ कि सवसम्मति से निकाल दिया गया। अपनी इतनी ही ससदीय सेवा है। सोचता हू, एक बार चुनाव लडकर हार लू तो अपनी पीढी का नारा 'भोगा हुआ यथाथ' साथक हो जाए। तब शायद मैं मातमपुर्सी के योग्य मूड बना सकू।

अपनी असमथता के कारण म चुनाव के बाद हारे हुओ की गली से नही निकलता। पर ये अनन्त आशावान लोग कही मिल ही जाते हैं। एक साहब पिछले पन्द्रह सालो से हर चुनाव लड रहे हैं और हर बार जमानत जब्त करवाने का गौरव प्राप्त कर रहे हैं। वे नगर निगम का चुनाव हारते हैं, तो समझते हैं, जनता मुझे नगर के छोटे काम की अपेक्षा प्रदेश का काम सौंपना चाहती हैं। और वे विधान सभा का चुनाव लड रहे है। यहा भी जमानत जब्त होती है, तो वे सोचते हैं, जनता मुझे देश की जिम्मेदारी सौपना चाहती है—और वे लोक सभा का चुनाव लड जाते हैं।

हार के बाद वे मुझे मिल जाते है। बाल बिखरे हुए, बदहवास। मेरा हाथ पकड लेते हैं। झकझोर कर कहते हैं—टेल मी परसाई, इज़ दिस डेमोक्रेसी? यह क्या जनतन्त्र है? म कुछ 'हा हू' करके छूटना चाहता हू, तो वे मेरे पाव पर पाव रख देते हैं और मेरे मुह से लगभग मुह लगाकर कहते हैं—नही, नहीं, तुम्हीं बताओ। यह क्या जनतन्त्र है?

मुझे कहना पडता है—यह जनतन्त्र नही है। पिछले पन्द्रह-बीस सालो मे जब जब वे चुनाव हारे हैं तब-तब मुझे यह निणय देना पडता है कि यह जनतन्त्र झूठा है। जनतन्त्र झूठा है या सच्चा—यह इस बात से तय होना हैं कि हम हारे या जीते? व्यक्तियो का ही नही पार्टियो का भी यही सोचना है कि जनतन्त्र उनकी हार जीत पर निभर है। जो भी पार्टी हारती है, चिल्लाती है—अब जनतन्त्र खतरे मे पड गया। अगर वह जीत जाती, तो

जनतन्त्र सुरक्षित था।

एक ओर अनत आशावान हैं। कोई शाम को उन्हें दो घटे के लिए लाउड स्पीकर दिला दे, तो वे चौराहे पर नेता हो जाते हैं और जनता की समस्या के लिए लडने लगते हैं। लाउड स्पीकर का नेता जाति की वृद्धि म क्या स्थान है, यह शोध का विषय है। नेतागीरी आवाज के फलाव का नाम है।

ये नेता मुझे कभी शाम को चौराहे पर गम भाषण करते मिल जाते हैं। क्रोध से माइक पर चिल्लाते हैं—राइट टाउन मे आवारा सूअर घूमते रहते हैं। कार्पोरेशन के अधिकारी क्या सो रहे हैं? मैं नगर निगम अधिकारी से इस्तीफे की माग करता हू। यह जनतत्र का मजाक है कि राइट टाउन में आवारा सूअर घूमते रहते हैं और साहब चन की नींद सोते हैं। इस प्रश्न पर प्रदेश सरकार को इस्तीफा देना चाहिए। मैं भारत सरकार से इस्तीफे की माग करता हू।

राइट टाउन के आवारा सूअरो को लेकर वे भारत सरकार से पिछले दस सालो से इस्तीफा माग रहे हैं। पर सूअर भी जहा के तहा हैं और सरकार भी। मगर ये लाउड स्पीकरी नेता अपनी लोकप्रियता के बारे मे इतने आश्वस्त हैं कि हर चुनाव मे खड हो जाते हैं। उनकी जमानत जब्त होती है। पर मैंने उनके चेहरे पर शिकन नहीं देखी। मिलते ही कहते हैं पसा चल गया। शराब चल गई। उन्होने अपनी हार का एक कारण ढूढ निकाला है कि चुनाव मे पैसा और शराब चल जाते हैं और वे हरा दिए जाते हैं। वे खुश रहते हैं। उन्हें विश्वास है कि जनता तो उनके साथ है, मगर वह पैसा और शराब के कारण दूसरे को वोट दे देती है। वे जनता से बिलकुल नाराज नही हैं। वे इस बात को जायज मानते हैं कि मतदाता उसी को वोट दे जो पैसा और शराब दे। अभी वे लोकसभा के चुनाव में जमानत जब्त कराने के बाद मिले तो खुश थे। बड उत्साह स बोले—वही हुआ। पैसा चल गया। शराब चल गई।

हमारे मनोषीजी छोटा चुनाव कभी नहीं लडते। हर बार सिर्फ लोक सभा का चुनाव लडते हैं। उनकी भी एक पार्टी है। अखिल भारतीय पार्टी है। लोगो ने उसका नाम न सुना होगा। उसका नाम है 'बच्चवादी पार्टी।

वाद है, 'वज्रवाद और सस्थापक हैं—डा० वज्रप्रहार। इस पार्टी की स्थापना मध्य प्रदेश के एक कस्बे टिमरनी मे डा० वज्रप्रहार ने की थी और वे जब देश मे अनुयायी ढूढने निकले तो हमारे शहर मे उन्हे मनीषीजी मिल गए। पार्टी मे कुल ये दो सदस्य हैं और क्राति के बारे मे बहुत गभीरता से सोचते हैं। मनीषी फक्कड फकीर है। पर हर लोकसभा चुनाव के वक्त जमानत के लिए ५०० रु० और पर्चा छपवाने का खर्च कही से जुटा लेते हैं। हर बार उन्हें चुनाव लडवाने के लिए डा० वज्रप्रहार आ जाते हैं। सभाए होती हैं, भाषण होते हैं। मैं देखता हू, दोनो धीरे धीरे सडक पर बडी गभीरता से बाते करते चलते हैं। डा० वज्रप्रहार कहते हैं—मनीषी, रिवोल्यूशन इज राउण्ड दी कानर! क्राति आने मे देर नही है। तब मनीषी कहते हैं पर डा० साहब, क्राति का रूप क्या होगा और उसके लिए हमे कैसा 'प्लान' कर लेना चाहिए, यह अभी तय हो जाना चाहिए। डाक्टर साहब कहते हैं—वो तु मेरे ऊपर छोड दो। आई शैल गिव यू गाइड लाइस। मैं तुम्हारा निर्देप करूंगा। पर तुम जनता को क्राति के लिए तयार कर डालो।

ये दोनो सच्चे क्रातिकारी कई सालों से गभीरतापूवक क्राति की योजना बना रहे हैं, पर पार्टी मे तीसरा आदमी अभी तक नही आया। इस बार मैंने पूछा—मनीषीजी, डा० वज्रप्रहार नहीं आए? मनीषी ने कहा—मेरा उनसे सैद्धातिक मतभेद हो गया। भारतीय राजनीति की कितनी बडी ट्रेजडी है कि जिस पार्टी मे दो आदमी हो उन्हीमे सद्धातिक मतभेद हो जाए। मनीषी ने कहा—उनकी चिट्ठी आई है। इस पर्चे मे छपी है। उन्होने अपना पर्चा बढा दिया—'इटरनशनल न्यूज'। डाक्टर साहब का बडा गभीर पत्र है—आइ एम रिप्लाइग टु द पोलिटिकिल पाट आफ योर लेटर।

मनीषी की जमानत जप्त हो गई है, पर क्राति की तैयारी दोनो नेता बराबर करते जा रहे हैं।

एक दिन मैंने पोस्टर चिपके देखे—'जनता के उम्मीदवार सरदार केसरसिह को वोट दो।' कोई नही जानता, ये कौन हैं। जिस जनता के उम्मीदवार हैं वह भी नही जानती। किसीने मुझे बताया कि वे खडे हैं सरदार केसरसिह। मैंने पूछा—किस मकसद से आप चुनाव लड रहे हैं? उन्होने सादा जवाब दिया—मकसद? अजी, मकसद यह क्या कम है कि आप जैसा

आदमी पूछे कि सरदार केसरसिंह कौन हैं ?

एक साहब अभी जनता की आवाज पर दो चुनाव लड चुके और जमानत खो चुके हैं। जनता भी अजीब है। वह आवाज देती है, पर वोट नही देती। वे तीसरे चुनाव की योजना अभी से बना रहे हैं।

लोग जनता की आवाज कैसे सुन लेते हैं। किस 'वेव लेंग्थ' पर आती है यह? मैं भी जनता में रहता हू, बहरा भी नही हू, पर जनता की आवाज मुझे कभी सुनाई नही पडती। ये लोग आशा के किस झरने से पानी पीते हैं कि अनत आशावान रहते हैं? इनकी अतरात्मा मे कौन सी वह शक्ति है, जो इन्हें हर हार के बाद नया उत्साह देती है? मुझे यह शक्ति और यह अनत आशा मिल जाए तो कमाल कर दू। जनतत्र के इन शाश्वत आशावान रत्नो को सिर्फ प्रणाम करना ही अपने हिस्से में आया है।

पहले वह ठीक था। वह अपर डिविज़न क्लर्क है। बीवी है, दो बच्चे हैं। कविता वगरह का शौक है। तीसरा बच्चा होने तक यू० डी० सी० का काव्य प्रेम बराबर रहता है। इसके बाद वह भजन पर आ जाता है—दया करो हे दयालु भगवन! और दयालु भगवन दया करके उसे परिवार नियोजन केन्द्र को भेज देते हैं, जहा लाल तिकोन मे उसे ईश्वर की छवि दिखती है।

वह मेरे पास कभी-कभी आता। कविता सुनाता। कोई पुस्तक पढने को ले जाता, जिसे नहीं लौटाता।

दो-तीन महीने वह लगातार नही आया। फिर एक दिन टपक पडा। पहले जिज्ञासु की तरह आता था। अब कुछ इस ठाठ से आया जसे जिज्ञासा शात करने आया हो। उसका कुर्सी पर बैठना, देखना, बोलना सब बदल गया था। उसने कविता की बात नही की। सुबह के अखबार की खबरो की बात भी नही की।

बडी देर तो चुप ही बैठा रहा। फिर गम्भीर स्वर मे बोला—मैं जीवन के सत्य की खोज कर रहा हू।

मैं चौका। सत्य की खोज करनेवालो से मैं छडकता हू। वे अकसर सत्य की ही तरफ पीठ करके उसे खोजते रहते है।

मुझे उसपर सचमुच दया आई। इन गरीब क्लर्कों को सत्य की खोज करने के लिए कौन बहकाता है? सत्य की खोज कई लोगो के लिए ऐयाशी है। यह गरीब आदमी की हैसियत के बाहर है।

मैं कुछ नही बोला। वही बोला—जीवन भर मैं जीवन के सत्य की खोज करूगा। यही मेरा व्रत है।

मैंने कहा—रात भर खटमल मारते रहोगे, तो सोओगे कब!

वह समझा नही। पूछा—क्या मतलब?

मैंने कहा—मतलब यह कि जीवन भर जीवन के सत्य की खोज करते रहोगे, जीओगे क्या मरने के बाद?

उसने कहा—जीना? जीना कैसा? पहले जीवन के उद्देश्य को तो मनुष्य जाने।

उसे रटाया गया था। मैंने फिर उसे पटरी पर लाने की कोशिश की। कहा—देख भाई, बहुत से बेवकूफ जीवन का उद्देश्य खोजते हुए *निरुद्देश्य* जीवन जीते रहते हैं। तू क्या उन्हींमे शामिल होना चाहता है।

उसे कुछ बुरा लगा। कहने लगा—आप हमेशा इसी तरह की बातें करते हैं। फिर भी मैं आपके पास आता हू, क्योंकि मैं जानता हू कि आप भी सत्य की खोज करते हैं। आप जो लिखते हैं, उससे यही मालूम होता है।

मैंने कहा—यह तुम्हारा खयाल गलत है। मैं तो हमेशा झूठ की तलाश मे रहता हू। कोने कोने मे झूठ को ढूढता फिरता हू। झूठ मिल जाता है, तो बहुत खुश होता हू।

न वह समझा, न उसे विश्वास हुआ। वह मुझे अपनी तरह ही सत्यान्वेषी समझता रहा।

मैंने पूछा—तुम एकदम से सत्यान्वेषी कैसे हो गए? क्या दफ्तर मे पैसो का कोई गोलमाल किया है?

उसने कहा—नहीं, मुझे गुरु मिल गए हैं। उन्होंने मुझे सत्य की खोज मे लगाया है।

मैंने पूछा—कौन गुरु हैं वे?

उसने नाम बताया। मैं उन्हें जानता था।

यू० डी० सी० बोला—गुरुदेव की वाणी मे अमृत है। हृदय तक उनकी बात पहुच जाती है।

मैंने पूछा—दिमाग तक बात पहुचती है या नहीं?

उन्होंने कहा—दिमाग! दिमाग को तो पलट देती है।

इसका नमूना तो वह खुद था।

वह मेरे पास कभी-कभी आता। उसकी साधना लगातार बढ़ रही थी। *एक दिन आते ही पूछने लगा—बताइए, मैं कौन हू?*

मैंने कहा—तुम बिहारी लाल हो, यू० डी० सी०।

उसने कहा—नहीं, यह भ्रम है। बिहारीलाल तो इस स्थूल चोले का नाम है। मैं शुद्ध बुद्ध आत्मा हू।

मैंने कहा—यार, महीने भर पहले ही तेरे यहा बच्चा हुआ है। क्या आत्मा बच्चा पैदा कर सकती है?

उसने कहा—आपका यह तर्क गलत है। गुरुदेव ने कहा है, ऐसे प्रश्नो का उत्तर मत दिया करो। कोई भी मेरे इस प्रश्न का ठीक जवाब नही देता। पत्नी से मैंने पूछा—मैं कौन हू? तो वह कहती है—तुम मेरे पति हो। बड़े लडके से मैंने पूछा—मैं कौन हू? तो वह कहता है—तुम हमारे पापा हो। दफ्तर के साहब से पूछा—सर, मैं कौन हू? तो उन्होने जवाब दिया—तुम पागल हो। पर मैं निराश नही होता। गुरुदेव ने कहा है, लगातार इस प्रश्न का उच्चारण किया करो— मैं कौन हू? मैं कौन हू'? एक दिन तुम इसका उत्तर पा जाओगे। और अपने को जान जाओगे।

वह दो-तीन महीने नही आया। उसके साथियो ने बताया कि वह पाक मे शाम को 'मैं कौन हू? मैं कौन हू?' कहता हुआ नाचता रहता है। दफ्तर मे भी दिन भर कहता रहता है—'मैं कौन हू?' फाइलो पर लिख देता है। 'मैं कौन हू?' जहा उसे दस्तखत करने होते है वहा लिख देता है— मैं कौन हू?'

एक दिन वह फिर आया। वही जीवन के सत्य की बातें करता रहा। गुरुदेव के गुणगान जब कर चुका तब मैंने उससे पूछा—तुम्हारे गुरु ने सत्य को पा लिया?

उसने कहा—बहुत पहले।

मैंने पूछा—वे कहा रहते हैं?

उसने कहा—उनका आलीशान आश्रम है। एयरकंडीशन है पूरा।

मैंने पूछा—क्या गुरु की आत्मा को गर्मी लगती है।

उसने कहा—गुरुदेव ने ऐसे प्रश्ना का जवाब देने से मना किया है।

मैंने पूछा—तुम्हारे गुरुदेव के पास बढिया कार है न?

उसने कहा—हा, है।

फिर पूछा—वे बढिया भोजन भी करते होगे?

उसने कहा—हा, करते हैं।

मैंने पूछा—क्या आत्मा को पकवानो की इतनी भूख लगती है?

उसने कहा—गुरुदेव ने ऐसे प्रश्नो का जवाब देने से मना किया है।

तब मैंने उससे कहा—तुम्हारे गुरु ने जीवन के सत्य को पा लिया है। इधर एअर कडीशड मकान और कार वगैरह भी पा लिए हैं। उनके पास पैसा भी है। उन्होने पैसा भी पा लिया है। याने गुरु की दृष्टि म सत्य वह है, जो अपने को बगला कार और पैसे के रूप मे प्रकट करता है। अच्छा, यह यह तो बताओ कि तुम्हारे गुरु को इतना पैसा कहा से मिलता है?

उसने कहा—गुरुदेव के बारे मे यह प्रश्न उठना ही नही है। वे अलौकिक पुरुष हैं। वे तो भगवान की कोटि मे आने वाले हैं।

मैंने उससे पूछा—तुम यूनियन मे हो?

उसने कहा—नही, गुरुदेव का आदेश है कि भौतिक लाभ के इन सघर्षों मे साधक को नहीं पडना चाहिए।

मैंने कहा—तो फिर गुरु का सत्य अलग है और तुम्हारा सत्य अलग है। दोनो के सत्य एक नहीं हैं। गुरु का सत्य वह है जिससे बगला, कार और रुपया जैसी भौतिक प्राप्ति होती है। और तुम्हारे लिए वे कहते हैं कि भौतिक लाभ के सघर्ष मे मत पडो। यह तुम्हारा सत्य है। इनमें कौन सा सत्य अच्छा है? तुम्हारा या गुरु का?

वह मुश्किल मे पड गया। जवाब उसे सूझा नहीं तो चिढ गया। कहने लगा—आप अश्रद्धालु हैं। ऊटपटाग बातें करते हैं। मैं आपके पास नहीं आऊगा।

वह नही आया। मगर मुझे समाचार मिलते रहते थे कि साधना उसकी लगातार बढ रही है। वह दफ्तर के काम मे गफलत करता है। फाइलों पर नोट की जगह लिख देता है—'मैं कौन हू?' साहब उसे बुलाते हैं तो चपरासी से कह देता है—मैं बिहारीलाल नहीं हू। मैं नहीं जानता, मैं कौन हू। मैं अपने को खोज रहा हू।

और एक दिन मुझे खबर मिली कि सस्पेंड कर दिया गया है।

एक दिन उसका एक साथी मुझे मिला। मैंने उसके बारे मे पूछा तो उसने बताया कि अब वह गुमसुम रहता है और कुछ सोचता रहता है।

मैंने पूछा—'मैं कौन हू?' प्रश्न करता है या नहीं?

उसने बताया—अब 'मैं कौन हू?' प्रश्न नहीं करता। शायद उसे उत्तर मिल गया है। साधना का मामला है।

काफी दिन बीत गए।

एक दिन वह अचानक आया। वह बदल गया था। दुखी था पर उसमे एक खास किस्म की दृढता भी आ गई थी। उसने सस्पेंड होने और व्यक्तिगत मुसीबतो की बातें बताइ। सत्य चर्चा उसने बिलकुल नहीं की।

उसने कहा—मैं आपके पास इसलिए आया था कि कोई अच्छा फौजदारी वकील करा दीजिए। आप तो बहुत वकीलो को जानते हैं।

मैंने कहा—मामला क्या है?

उसने कहा—मैंने फौजदारी की है। केस चलेगा।

मैंने पूछा—कैसी फौजदारी?

उसने तब मुझे बताया—आप तो मुझे साल भर से देख ही रहे हैं। मै सत्य की खोज मे लगा था। 'मैं कौन हू?' के सिवा और कोई धुन मुझे नही थी। मैं इसमे बरबाद हो गया। जिन गुरुदेव ने मुझे इस रास्ते पर लगाया था, उनके पास मैं परसों गया। वे बोले—आओ साधक बठो। उस समय दो शिष्य उनके शरीर की मालिश कर रही थी। मालिश निबटने के बाद उन्होंने मुझे अपनी पवित्र आखों से देखा। पूछने लगे—साधना कसी चल रही है? मैंने कहा—गुरुदेव, साधना तो सफल हो गई।

वे चौंके। पूछा—'मैं कौन हू?' इस प्रश्न का उत्तर मिल गया?

मैंने कहा—नहीं, पर इस प्रश्न का ठीक उत्तर मिल गया कि तुम कौन हो।

और साहब, मैं गुरु पर टूट पडा। खूब पिटाई की। अब मुझे एक अच्छा वकील दिला दीजिए।

०००

मुद्रक प्रिंट आर्ट, नवीन शाहदरा, दिल्ली 1386